चन्दामामा
अगस्त १९९४
RS
4
Sachidas

PARLE
Parle-G

डायमण्ड कॉमिक्स

डायमण्ड कॉमिक्स मैजिक फन बॉक्स

120 रु. के स्थान पर केवल 60 रु. में प्राप्त करें

- 5 मल्टी डाइमैंशनल कॉमिक्स — मूल्य 30/-
- 10 डायमण्ड कॉमिक्स — मूल्य 30/-
- 1 लंच बॉक्स — मूल्य 20/-
- अनेक आकर्षक उपहार — मूल्य 40/-

कुल मूल्य 120/-

जीवन में भर लो रंग डायमण्ड कामिक्स के संग

अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनें और अपने जीवन में खुशियों और मनोरंजन की बहार लाएं.

आप केवल नीचे दिये गए कूपन को भरकर और सदस्यता शुल्क के दस रुपये डाक टिकट या मनीआर्डर के रूप में भेज दें।

हर माह छः पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 4/- रुपये की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री (लगभग 7/- रुपये) की सुविधा दी जायेगी। हर माह हम पांच छः पुस्तकें निर्धारित करेंगे यदि आपको वह पुस्तकें पसन्द न हों तो डायमण्ड कॉमिक्स की सूची में से पांच छः पुस्तकें आप पसन्द करके मंगवा सकते हैं लेकिन कम से कम पांच से छः पुस्तकें मंगवाना जरूरी है।

आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जाएगा। यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें। यदि निर्धारित पुस्तकें पसन्द नहीं हैं तो अपनी पसन्द की कम से कम 7 पुस्तकों के नाम भेजें ताकि कोई पुस्तक उपलब्ध न होने की स्थिति में उनमें से 5 या 6 पुस्तकें आपको भेजी जा सकें।

इस योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।

हाँ! मैं "अंकुर बाल बुक क्लब" का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूं और आपके द्वारा दी गई सुविधाओं को प्राप्त करना चाहता/चाहती हूं। मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूं।

नाम ____________________

पता ____________________

____

डाक __________ जिला __________ पिनकोड __________

सदस्यता शुल्क 10 रु. डाक टिकट/मनीआर्डर से भेज रहा/रही हूं।

मेरा जन्म ____________________

नोट : सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।

डायमण्ड कामिक्स प्रा.लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Say "Hello" to text books and friends
'Cause School days are here again
Have a great year and all the best
From Wobbit, Coon and the rest!

It's time to go back to school again. Time for text books. Time for games. Time to meet old friends. And make new ones. Time to start studying again. Because there's so much to learn about the world around you.
From all of us here at Chandamama, have a great year in school. And remember to tell us what you've learnt everyday, when you come home from school !
SUPER RUBBER
THE
CHANDAMAMA
COLLECTION
ARTIG1246

चन्दामामा

अगस्त १९९४

एक प्रति : ४.००

वार्षिक चन्दा : ४८.००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

सहयोग और स्पर्धा

तीस - चालीस वर्षों के पहले भारत के विश्वविद्यालय उन विद्यार्थियों के ही नाम प्रकाशित करते थे, जिन्हें डाक्टरेट की उपाधि प्रदान की गयी हो। संशोधन व अध्ययन द्वारा डाक्टरेट की उपाधि की प्राप्ति उन दिनों में बहुत ही गौरवनीय उपलब्धि मानी जाती थी। अन्य परीक्षाओं के परिणाम केवल समाचार-पत्रों में प्रकाशित होते थे। सफल विद्यार्थियों के क्रमांक मात्र समाचार-पत्रों में दिये जाते थे। वार्षिक स्नातकोत्सव के बाद उनके नाम मात्र समाचार-पत्रों मे प्रकाशित होते थे, जिन्हें सुवर्ण पदक मिले हों।

किन्तु वर्तमान पद्धति तो बिल्कुल ही भिन्न है। क्रमांकों की लंबी सूची की जगह पर उन विद्यार्थियों के नाम, अंक, उनकी पाठशाला आदि विवरण दिये जा रहे हैं, जो उत्तम श्रेणी में पारित हुए हैं। उनके छाया-चित्रों के साथ-साथ उनके साक्षात्कार भी प्रकाशित किये जा रहे हैं। हाल ही में यह भी देखा गया है कि पाठशालाएँ भी पर्याप्त धन खर्च करके अपने उन विद्यार्थियों की सूची तथा छाया-चित्र प्रकाशित कर रही हैं, जो उनके यहाँ से उत्तम श्रेणी में पारित हुए हैं।

आजकल वैद्य, इंजनीयरिंग आदि व्यावसायिक कोर्सों में प्रवेश पाने के लिए प्रवेश-परीक्षा लिखनी पड़ती है। अध्यापन- संस्थाएँ अपने सफल विद्यार्थियों की सूची, नाम तथा छाया-छित्र अखबारों में प्रकाशित करती हैं।

इससे क्या बच्चों में भी स्पर्धा की भावना उत्पन्न नहीं होती, जो नष्टदायक है। इसको मद्देनज़र रखते हुए तमिलनाडु के एक शिक्षा-वेत्ता ने शायद ठीक ही कहा है कि शैक्षणिक संस्थाओं को चाहिये कि वे स्पर्धा से सहयोग की और विद्यार्थियों का रुख मोडें; उनकी विचार-पद्धति में परिवर्तन लायें। उनका भय है कि स्पर्धा को प्रधानता देने पर तकनीकी मंत्र-मानवों की हम सृष्टि करेंगे।

शिक्षा को मानवीकरण करने की वे सलाह देते हैं। उनका कहना है कि विद्यार्थी सावधानी और भाग लेने में अधिक क्रियाशील रहें, ना कि सफलता और असफलता में। अगर पाठशालाएँ इस दिशा में क़दम उठावें तो कितना अच्छा होगा।

वर्ष : ४७ | अगस्त १९९४ | अंक : १

एक प्रति : रु. ४ /- | वार्षिक चन्दा : रु ४८/-

"मेरि"
दुनिया भर की नारियों को, 31 से अधिक सालों से मनमोहक, खूबसूरत और मजबूत स्वर्णपट्टित ज़ेवरों से सँवार रहे हैं।
मेरि अब पेश करते हैं चकाचौंध करने वाले रंगबिरंगे और उत्तम डिज़ाइन के ज़ेवर, जो शुद्ध चाँदी पर सोने का पानी चढ़ा कर और अमरीकी हीरे (A.D) से जड़ा कर बनाये गये हैं।
ज़ेवर वी.पी.पी. द्वारा मँगाये जा सकते हैं। हमें ज़ेवर की संख्या का उल्लेख देते हुये लिखिये। मंदिर की मूर्तियो और भरत नाट्यम के लिए ज़ेवर बनाना हमारी विशेषता है। मुफ्त रंगीन सूचापत्र के लिये लिखिये। कृपया पत्रव्यवहार हिन्दी या अंगरेज़ी में ही करिये।
No:193 Rs. 300/50
No:154 Rs. 300/50
No:152 Rs. 200/50
No:43 Rs. 150/50
No:257 Rs. 350/50
No:232 Rs. 300/50
No:8 Rs. 200/50
No:294 Rs. 250/50
No:123 Rs. 200/50
No:214 Rs. 300/50
No:37 Rs. 200/50
No:952 Rs. 500/50
No:86 Rs. 400/50
A. D.
No:49 Rs. 400/50
No:99 Rs. 600/50
No:266 Rs. 600/50
A. D.
No:834 Rs. 450/50
A. D.
No:862 Rs. 700/50
A. D.
No:876 Rs. 400/50
A. D.
No:830
Rs. 1250/50
A. D.
No:916 Rs. 300/50
MERI GOLD COVERING WORKS
P.O. Box 1405, 18, Ranganathan Street, T. Nagar,
Madras 600 017, Phone: 444671, 442513

समाचार-विशेषताएँ

सँवरता देश

दोनों ने एक दूसरे को दो ख़त लिखे। उन दो मात्र ख़तों से उनकी दोस्ती हुई। दोनों नेताओं ने हाथ मिलाये और निर्णय किया कि भविष्य में इस दोस्ती को और सुदृढ बनायें। दक्षिण एशिया संबंधी विषय पर 'चन्दामामा' में प्रकाशित 'समाचार-विशेषताएँ' से (अक्तूबर - ९३) आपको पूरी जानकारी प्राप्त हुई होगी। इससे हमें यह भी ज्ञात हो गया है कि पालस्तीन का आविर्भाव कैसे हुआ? वाषिंगटन नगर में उभय पक्षों के बीच ऐतिहासिक समझौता हुआ। उसके अनुसार पालस्तीन के दक्षिणी भाग गाज़ास्ट्रिप के प्रांतों से इज़राइल को तीन महीनों के अंदर हट जाना पड़ेगा, जो २७ वर्षों से इस भू-भाग पर अपना शासन चला रहा है। इससे पालस्तीनी अपना शासन क़ायम कर पायेंगे। समझौते के अनुसार उन्हें दिसंबर ९३ तक वहाँ से चला जाना होगा। परंतु ऐसा नहीं हुआ। वहाँ अकस्मात हिंसात्मक घटनाएँ घटीं। इज़राइल तथा पालस्तीन की स्वाधीनता के लिए लड़नेवाली संस्थाओ में शांति के लिए की जानेवाली चर्चाओं में विघ्न पड़ गया।

नार्वे की श्रद्धा तथा प्रयत्नों के ही कारण उस समय 'वाषिंगटन समझौता' हो पाया। इज़राइल की यह ख्वाहिश और मांग भी पूरी हुई कि पालस्तीन स्वाधीनता संस्था (पी.एल.ओ.) उसके अस्तित्व को माने और अपनी स्वीकृति की मुहर लगा दे।

पालस्तीन स्वाधीनता संस्था भी चाहती थी कि इज़राइल उस संस्था के अस्तित्व को स्वीकार करे। और दोनों अपनी मांगों को पूर्ण करने में सफल हुए। इस प्रयत्न की सफलता में नार्वे का बड़ा हाथ है।

इसके बाद ही दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों ने

अमेरीकी अध्यक्ष बिल क्लिंटन के समक्ष वाषिंगटन में समझौते पर हस्ताक्षर किया।

सारा संसार इस प्रतीक्षा में था कि तीन महीनों के अंदर अधिकार की अदला-बदली होगी; समझौते को कार्य-रूप दिया जायेगा। परंतु ऐसा नहीं हुआ। इसका कारण था दिसंबर में घटित 'हेब्रान मास्क' का रक्त - पात, जिसमे ३०-४० पालस्तीनी मारे गये। सारे विश्व को इस घटना से धक्का लगा। तक्षण ही पी.एल.ओ. ने चर्चाओं से भाग लेने से अस्वीकार कर दिया।

जब उन प्रदेशों में तनाव कम हो गया और शांति की स्थापना हुई तब इस बार ईजप्ट ने तीव्र प्रयत्न किये और दोनों पक्षों की बैठकों का आयोजन किया।

मई को ईजप्ट की राजधानी कैरो में इज़राइल के प्रधान मंत्री राबिन तथा पी.एल.ओ. के नेता यासर अराफत के बीच चर्चाएँ हुई। समझौता हुआ और दोनों ने उसपर दस्तख़त किया। आठ महीनों में दोनो ने फिर से एक बार हाथ मिलाया।

मई १० को पालस्तीन के १५० पुलिस वाले गाज़ास्ट्रिप पहुंचे। उनको वहाँ देखकर पालस्तीनियों ने हर्षध्वनियाँ कीं। इसके एक सप्ताह के बाद इज़राइल ने अपने प्रधान सेना - कार्यालय को पी.एल.ओ. के सुपुर्द किया।

यों उस प्रांत में शासन की अदला-बदली हुई। पश्चिमी तट के जेरिको नगर में मई १३ को पी.एल.ओ. के कार्यकर्ताओं ने पुलिस स्टेशन को अपने अधीन लिया। स्टेशन पर उन्होने अपना झंडा फहराया, जिसे देखकर पालस्तीनियों की खुशी का ठिकाना ना रहा।

इस प्रकार पालस्तीन के एक देश के रूप में सँवरने का काम आरंभ हो गया है। अक्तूबर के अंत में राष्ट्रीय चुनाव संपन्न होनेवाले हैं। तब तक पी.एस.ओ. के नेतृत्व में तात्कालिक रूप से शासन-भर संभाला जायेगा।

पी.एल.ओ. तथा इज़राइल ने संसार के सभी देशों से आग्रह किया है कि लंबी अवधि के बाद, पश्चिमी एशिया में जिस शांति की स्थापना हुई है, उसकी सुरक्षा में सभी देश अपना-अपना सहयोग दें।

अहंकारी और मूर्ख

बहुत पहले की बात है। रणधीर कर्पूर देश का राजा था। उसका बेटा कदन बहुत ही बड़ा बलशाली और पराक्रमी था। धैर्य-साहस का दूसरा नाम कदन था। किन्तु हाँ, उसमें एक ही त्रुटि भी-अहंकार।

कदन कवि और पंडितों के प्रति आदर की भावना नहीं रखता था। वह उनकी श्रेष्ठता कदापि मानने तैयार नहीं था। साधु-सन्यासियों से उसे चिढ़ थी। वह नास्तिक था। उसको इस बात का गर्व था कि संसार में कोई भी मुझसे बड़ा नहीं है।

एक दिन एक ऋषि उसके यहाँ आया। ऋषि ज्ञानी था और उसकी दिव्य दृष्टि थी। उसने राजा से कहा ''राजन, क्या तुम जानते हो कि तुम्हारे राज्य पर हज़ार सालों की विपत्ति है।''

हज़ार सालों की विपत्ति पर लोग चर्चाएँ करने लग गये। दुर्भरारण्य के पास एक कुग्राम है। उस गाँव के प्रवेशद्वार के पास एक घंटा है। हज़ार सालों में एक बार वह बजता है। कहा जाता है कि उसकी भयंकर ध्वानि से भूमि कंपित होती है और राज्य के सारे घर धराशायी हो जाते हैं।

उस गाँव से जब दुर्भरारण्य में प्रवेश करते हैं तब वहाँ एक गहरा कुआँ है। उसमें प्रवेश करनेवालों का बाहर आना संभव नहीं है। सबका कहना है कि वह पाताल का मार्ग है। हज़ार सालों में एक बार उसमें से दस सिरोंवाला एक विषसर्प बाहर आता है और उस राज्य के जंतुओं को निगल जाता है।

यह विषसर्प अपने मुँह से विषज्वालाएँ फैलाता है। इससे राज्य की फसलें, पेड़ आदि का सर्वनाश हो जाता है। हरियाली राज्य-भर में कही नहीं बच पाती।

दुर्भरारण्य में एक राक्षस भी है। वह कहीं रहस्य-मंदिर में गाढ़ी निद्रा में पड़ा रहता है। वह कहाँ है, इसका पता किसी को नहीं है।

रामकृष्ण

हज़ार सालों में एक बार वह नींद से जागता है और मानवों को खाकर फिर से निद्रा की गोद में चला जाता है।

इस प्रकार हज़ार सालों में एक बार कर्पूर देश का विनाश होता है और पुनः उसका पुनरुथ्यान होता है। ऋषि की इन बातों को सुनकर राजा घबरा गया। "अगली पूर्णिमा के ठीक दो महीने बाद फिर से राज्य पर हज़ार सालों की वह विपत्ति आनेवाली है। मैने अपनी दिव्यदृष्टि से इसे देखा है और तुम्हें सावधान करने आया हूँ।" ऋषि की इन बातों ने रणधीर को बहुत चिंतित कर दिया।

राजसभा में बैठे कदन ने भी ये बातें सुनीं और वह हँस पड़ा। उसे ऐसी बातों में विश्वास ही नहीं था। उसकी दृष्टि में ऐसी बातें मनगढ़ंत बाते थीं। उसका कहना था कि अपने स्वार्थ के लिए, अपना उल्लू सीधा करने के लिए, अपनी धाक जमाने के लिए साधु-सन्यासी ऐसी अर्थहीन बातें करते रहते हैं। ऋषि की इन बातों से वह अति क्रोधित हुआ और उसने अपनी तलवार ऋषि पर फेंकी। उस तलवार ने ऋषि के कमंडल को ज़मीन पर गिरा दिया।

"जो यह नहीं जानता कि तलवार कब किसके सिर पर आ गिरेगी, वह हज़ार सालों में एक बार आनेवाली विपत्ति का अंदाज़ा कैसे लगा सकता है? ऐसी कल्पित तथा खोखली बातों का विश्वास बेवकूफ ही कर सकते हैं ना कि कर्पूर राज्य के राजा" कदन ने निर्भीकता से कहा।

ऋषि ने तक्षण अपना कमंडल अपने हाथ में लिया और कहा "अहंकार से भरे अंधे राजा से देश का सदा नष्ट ही होता है। किसी भी क्षण देश का विनाश हो सकता है। हज़ार सालों की विपत्ति से देश को बचाना और ऐसे राजा को सुधारना मेरी जिम्मेदारी है। ठीक चार दिनों के बाद यहाँ एक महावीर आयेगा, जो राजकुमार का सामना करेगा। वही इस देश की रक्षा कर पायेगा औड़ करेगा भी"।

ऋषि के इस कथन से रणधीर प्रसन्न तो अवश्य हुआ, परंतु मन ही मन उसे दुख भी हुआ। वह अपने बेटे से कुछ कह नहीं पाया और चुप रह गया।

राजधानी से ऋषि निकल पड़ा और एक साधारण ग्रामीण का उसने आतिथ्य स्वीकार किया। उससे उसने कहा "तुम्हारे आतिथ्य से मैं अति प्रसन्न हूँ। तुम्हें किसी समस्या का सामना करना पड़ रहा हो तो कहो, मैं सुलझाऊँगा"।

ग्रामीण ने कहा "मेरा एक निरर्थक पुत्र है। नाम उसका विद्याधर है। मै पढ़-लिखने को कहता हूँ तो वह कहता है कि मैं महावीर बनूँगा। और महावीर बनने की योग्यता भी उसमें है नहीं। बिल्ली को भी देखकर वह डरने लगता है। तलवार हाथ में लेते हुए उसके हाथ काँपते हैं। अंधेरे में अकेले जाने की उसकी हिम्मत नहीं। भूतों की कहानियाँ सुनते-सुनते वह थर-थर काँपने लगता है। परंतु महावीर बनने की इच्छा रखता है। मेरी समझ में नहीं आता कि उसे कैसे सुधारूँ? आप क्या मेरी सहायता कर सकते हैं, जिससे उसकी बुद्धि ठिकाने पर आये?"

"अपने बेटे को मेरे साथ भेजो। उसे योग्य बनाकर तुम्हारे पास वापस भेजूँगा" ऋषि ने कहा।

ग्रामीण ने ऋषि के प्रस्ताव को आनंद से स्वीकार किया। ऋषि विद्याधर को लेकर राजधानी निकल पड़ा। रास्ते में उसने उससे कहा "मेरा कहा मानो और करो। इससे तुम महावीर बनोगे और तुम्हारी ख्याति दसों दिशाओं में व्याप्त होगी। परंतु हाँ, कुछ क्षणों तक तुम्हें अपने हाथों में तलवार पकड़नी होगी। कदन से तुम्हें युद्ध करना पड़ेगा। मैं आश्वासन

देता हूँ कि इससे तुम ज़ख्मी नहीं होगे, चोट नहीं पहुँचेगी।यह युद्ध तुम्हें सिर्फ एक ही बार लड़ना होगा।जीवन मेंफिर से कभी भी तलवार हाथ में पकड़ने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी"।

"अगर एक ही बार की बात हो तो किसी तरह कर लूँगा। उसके बाद तो मैं हाथ लगाऊँगा ही नहीं"। काँपते हुए विद्याधर ने कहा।

विद्याधर को लेकर ऋषि राजसभा में निर्धारित समय पर पहुँचा। उसने राजा रणधीर से कहा "राजन, दुर्भरारण्य के समीप के गाँव में एक शमी वृक्ष है। इसके पहले देश का जब सर्वनाश हुआ तब जो बच गये, उनमें से कुछ लोगों ने घोर तपस्या की। उन्होने हज़ार सालों में एक बार आनेवाली विपत्ति से बचने की कुछ

हो गया। उनमें से एक ने तलवार गिरा दी और भूमि पर गिर पड़ा। सबने यही समझा कि युवराज कदन की ही जीत हूई है। लेकिन नक़ाब हटाते ही मालूम हुआ कि विजयी विद्याधर ही है।

सबने दाँतों तले उँगली दबायी। 'विद्याधर की जय' के नारों से प्रदेश गूँज उठा।

तब ऋषि दोनों को एकांत में ले गया और बोला "मेरी महिमा से तुम दोनों के रूपों में परिवर्तन हुआ है। कदन विद्याधर हुआ और विद्याधर कदन। आप लोग चाहें भी तो यह रहस्य औरों को बता नहीं पायेंगे। विद्याधर, कदन बनकर ही रहना चाहे तो कदन को विद्याधर के रूप में ही रहना पड़ेगा। इसी रूप में कदन शमी वृक्ष से शक्तियों को प्राप्त करेगा और लोहे का घंटा, विषसर्प तथा राक्षस को हमेशा के लिए मिटा देगा।

कदन के रूप का विद्याधर राजा के अंत:पुर में बस गया। राजा ने उसे बुलाकर कहा "इस संसार में हर वीर की कभी ना कभी हार होती है। अपनी हार पर दुखी ना होना। फिर से तलवार हाथ में लो। धनुष-बाण संभालो और संसार को दिखाओ कि तुम कितने बड़े वीर हो। मंत्री तथा सेनाधिपति के पुत्र, जो कभी तुम्हारे हाथों हार चुके हैं, तुमसे लोहा लेने के लिए सन्नद्ध बैठे हैं। वे मौक़े की ताक़ में हैं। उन सबको हरा और और अपना नाम बनाये रख"। यों उसने कदन बने विद्याधर को प्रोत्साहन दिया।

विद्याधर ने ना के भाव में अपना सिर हिलाते

शक्तियाँ प्राप्त की हैं।

उन शक्तियों को उन्होने शव के आकार में उस पेड़ पर सुरक्षित रखा है। वे ही लोग पिशाच बनकर उन शक्तियों की रक्षा कर रहे हैं। मैने सोचा था कि इन शक्तियों को पाने का हक़दार कदन ही है। लेकिन अहंकार के नशे में जो मेरा ही अपमान करने पर तुल गया है, उससे यह संभव नहीं होगा। मैने पूरे देश का भ्रमण किया और आख़िर इस वीर को ढूँढ़कर ले आया हूँ। विद्याधर नामक इस युवक और कदन में युद्ध होगा और उस युद्ध में जो जीतेगा, वह दुर्भरारण्य जायेगा। देश पर आयी विपत्ति का वही अंत कर पायेगा। आप युद्ध का प्रबंध करवाइये।"

युद्ध आरंभ हुआ और कुछ-क्षणों में समाप्त

हुए कहा "विजय और हार भगवान के अधीन हैं। मेरी हार का कारण प्रत्यर्थी की शक्ति नहीं, बल्कि मेरा अहंकार है। पहले मैं इस अहंकार पर जीत पाऊँगा और फिर दूसरों पर। कुछ समय तक मैं पंडितों से शास्त्र सीखूँगा, एक मित्र को अपने साथ रखूँगा और सदा उत्तेजित करनेवाली गाथाएँ सुनता रहूँगा"।

पुत्र में हुए परिवर्तन को देखकर राजा बहुत खुश हुआ। राजा से विद्याधर ने उक्त बातें कहीं, इसका एक कारण है। वह तो तलवार हाथ में लेने से डरता था। अकेला रह ही नहीं पाता था। अंधकार से उसे ख़ौफ़ था। उन भयों से अपने को बचाने के लिए उसने चालाकी से ऐसा प्रबंध कर लिया।

हर दिन भाट लोग आते और विद्याधर की प्रशंसा में गीत गाते। उसे महावीर कहते हुए उसकी प्रशंसा के पुल बाँधते । अपनी प्रशंसा सुनते हुए वह घबड़ा जाता। उसे यह असहनीय लगता। पंडितों, कलाकारों तथा नागरिकों को मालूम ही नहीं था, जो हुआ। उन्हें तो उसका बरताव बहुत ही अच्छा लगने लगा। उसकी अच्छाई, मृदुल स्वभाव तथा आदर-भावना सबको अच्छी लगने लगी। वह नागरिकों के कष्ट सुनता और दान-धर्म द्वारा उनकी पूर्ति करता। इससे उसकी ख्याति दिन-ब-दिन बढ़ने लगी।

यों दिन, महीने, साल गुज़र गये। विद्याधर के रूपधारी कदन ने शमीवृक्ष से शक्तियाँ पायीं और हज़ार सालों में एक बार देश पर आनेवाली तीनों विपत्तियों को मिटा दिया। वह तो वीर था ही। उसे तपस्वियों की शक्तियाँ भी प्राप्त हुईं। इसलिए तीनों विपत्तियाँ का नाश करने में वह सफल हो पाया। ऋषि की भविष्यवाणी की सच्चाई को वह अब मान गया। उसे ज्ञात हो गया कि देश को संकट से बचाने के लिए ऋषि ने कितना बड़ा नाटक खेला। उसे ज्ञात हो गया कि ऋषि और तपस्वी लोक कल्याण चाहते हैं। उनका अनादर करना पाप है। इस ज्ञान-प्राप्ति से उसका अहंकार भी मिट गया। वह राजधानी लौटा।

ऋषि उस समय विद्याधर को एकांत में ले गया और बोला "केवल अहंकार के कारण कदन

इस महान कार्य को साधने से वंचित रह गया। वही इस देश का युवराज है। तुम तो केवल कारणजन्म हो। इस देश पर आयी विपत्ति को मिटाना उसका धर्म है और उसने यह धर्म निभाया है।''

यह सुनकर क्षण भर के लिए विद्याधर निराश हुआ। परंतु वह संभल गया। उसे युवराज बनकर रहने का कोई हक़ नहीं। हक़दार तो कदन है। किसी का हक़ छीनना ग़लत बात है। इसलिए उसने ऋषि से कहा ''स्वामी, मुझे मेरा रूप दे दीजिये। मुझपर कृपा कीजिये।''

ऋषि चकित हो बोला ''तुम देश के राजा बननेवाले हो। तुम तो इस सदवकाश को भी छोड़ने तैयार हो गये हो। देश भर में अब विद्याधर की प्रशंसा होने लगी है। क्या तुम अब भी उस प्रतिष्ठा का पात्र बने रहना नहीं चाहते?''

विद्याधर ने विनयपूर्वक कहा ''हर दिन महावीर कहकर मेरी प्रशंसा के पुल बाँधे जा रहे हैं। इससे मुझे तृप्ति नहीं हो रही है। मैं जान गया हूँ कि जो प्रशंसा मेरे योग्य नहीं, वह मुझे तृप्त नहीं कर सकती। परंतु कदन के रूप में मैंने जनता का जितना हो सके, कल्याण किया है। पुण्य कार्यों से कदन को जो प्रसिद्धि मिली, उससे मैं अति प्रसन्न हूँ। अब तो मैं चाहूँगा कि ऐसी प्रसिद्धि मेरे नाम पर, मुझे भी मिले। भविष्य में ऐसे प्रयत्न मैं ज़ारी रखूँगा। इसीलिए मैंने आपसे प्रार्थना की थी कि हमारे रूप यथावत् कर दीजिये''।

ऋषि उसकी बातों से प्रसन्न हुआ और बोला '' कदन का अहंकार मिट चुका है। तुम्हारा निकम्मापन भी दूर हो गया है। भविष्य में कदन तुम्हारी हानि पहुँचाना चाहेगा तो तुम दोनों के रूपों में पुनः परिवर्तन होगा। इसलिए सावधानी बरतो, अपने कर्तव्य निभाओ और सच्चे दोस्तों की तरह ज़िन्दगी गुज़ारो।'' उन्हें असली रूपों में बदल दिया और ऋषि चला गया।

धन-संपत्ति के साथ विद्याधर ने सद्बुद्धि भी पायी तो अहंकार को त्याजकर कदन ने विनय। दोनों के परिवर्तित व्यवहार से उनके माता-पिता बहुत ही संतृप्त हुए।

कीर्तिसिंह-३

(विचित्रवर्मा ने पंडितों के अभिप्रायों को जानने के बाद मंदिर का निर्माण करवाया था। भूगर्भ में प्राप्त देवी मूर्ति की प्रतिष्ठापना उसमें की। इसके कुछ वर्ष बाद उसका पुत्र जयवर्मा सिंहासन पर आसीन हुआ। कांभोज के राजा वरुणदत्त ने उसके अद्भुत मोतियों के हार को हड़पने की योजना बनायी। इस कार्य को साधने के लिए उसने एक नर्तकी को भेजा। षडयंत्र के विवरण जानकर विचित्रवर्मा ने एक ऐसा प्रतिव्यूह रचा, जिससे हार को हड़पना संभव नहीं हो पाया। किन्तु जयवर्मा इस सत्य से अपरिचित था। विचित्रवर्मा के मरणोरपरांत जयसेन ने जयवर्मा को उसके पिता का लिखा हुआ एक पत्र दिया- बाद)

जयसेन की पूरी बातें सुनने के बाद जयवर्मा ने उससे कहा "जो हुआ सो हुआ जयसेन। इसमें पिताश्री की कोई त्रुटि नहीं है। पिताश्री के विश्वास का मैं पात्र नहीं बन सका। उन्होने वह हार किसी को दान में तो नहीं दिया। वह तो उनके वारिस को ही मिलेगा। उनका वारिस क्या मेरा वारिस नहीं है?" कहते हुए उसने उस संदूक से पत्र निकाला और यों पढ़ने लगा।

"पुत्र जय, जयसेन ने तुम्हें सब कुछ बताया होगा। मुझे संपूर्ण विश्वास है कि मैने जो भी किया उसपर तुम क्रोधित नहीं हो। इसी विश्वास के बल पर मैने ऐसा साहस किया।

मेरे सिवा यह कोई नहीं जानता कि वह हार मैने कहाँ छिपा रखा है। जयसेन भी इस रहस्य को नहीं जानते। वह हार कहाँ है, यह जानने के लिए कुछ आधार मात्र तुम्हारे लिए छोड़े जा रहा हूँ।

जय, समस्त लोकों की पूज्यनीय परमेश्वरी

लक्ष्मी गायत्री

पाया। अनेकों प्रकार की व्याख्याएँ व विश्लेषण हुए, किन्तु कोई भी उसका सही अर्थ बता नहीं पाया। इससे यह जाना नहीं जा सका कि वह हार कहाँ है?

किन्तु अनेकों तर्क-वितर्कों के बाद हमारे राजा सुषेण ने निर्णय किया कि वह हार अवश्य ही पूर्वी जंगलों में स्थित उस शक्ति के मंदिर के प्रांगण में ही कहीं गाड़कर छिपाया गया होगा। उन्होंने भूमि को गाड़कर उसे ढूंढ निकालने के प्रयत्न भी किये, परंतु कुछ रुकावटें ऐसी आयीं, जिनसे उन्होने अपना प्रयास ज़ारी नहीं रखा। उसके बाद हमारे महाराज ने मालूम नहीं, क्यों इस दिशा में कोई कार्रवाई ही नहीं की।'' कहते हुए क्षण भर के लिए रुककर अपनी थकावट दूर की और फिर से कहना प्रारंभ किया ''महाराज हृदयपूर्वक चाहते हैं अपने पुत्र को यह हार मिले। वे तुम्हारी बुद्धिमत्ता में पर्याप्त विश्वास रखते हैं। कीर्तिसिंह जैसे बुद्धिशाली को तुम जैसी कुशाग्र बुद्धिवाली का सहयोग मिले तो यह कार्य-सिद्धि सुलभ होगी, शायद महाराज का यही अभिप्राय रहा होगा। महाराजा ने स्पष्ट बताया है कि कीर्तिसिंह पूर्वी जंगल में स्थित शक्ति के मंदिर में ही बंदी बनाकर रखा जाए। उनकी इन बातों में यही संकेत है, ऐसा मुझे लगता है।''

पिता की बातें सुनने के बाद शक्तिसेना ने कहा ''हाँ ऐसा ही होगा पिताश्री। ये सारी बातें छिपाकर महाराज ने हमारे लिए अवश्य ही

भी स्त्री ही है। वह किसके सम्मुख अपना सर झुकाती है? उस परमेश्वर का निवास-स्थल किस दिशा में है? मनुष्य के जीवन-आधार को प्रदान करनेवाला वह कौन है, जो पंचभूतों में से एक है। पुत्र, जिसे इसकी प्राप्ति का भाग्य हो, उसे इन प्रश्नों के उत्तर भी मिल जाएँगे। समाधान ढूँढ़ निकालनेवाले का लाभ भी होगा। तुम्हारा कल्याण हो, तुम्हें समस्त लाभ उपलब्ध हों, इसकी आशा करते हुए - तुम्हारा पिता विचित्रवर्मा।

जयवर्मा ने पूरा पत्र पढ़ा। श्रद्धा से आँखों से उसका स्पर्श किया और फिर से उसी संदूक में रख दिया। जयसेन ने कहा ''पाँच पीढ़ियाँ बीत गयीं, लेकिन कोई भी उसका अर्थ समझ नहीं

समस्या खड़ी कर दी है।''

जयसेन इसपर हँसा और बोला ''समस्या तो तुमने सुलझा दी है। अगर तुमने मुझे धैर्य दिया ना होता तो मैं इन बातों के बारे में सोच भी नहीं पाता''।

शक्तिसेना हँसकर चुप रह गयी।

दूसरे दिन जब जयसेन राजभवन पहुँचा तो समाचार मिला कि महाराज अपने निजी कक्ष में उसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जयसेन फ़ौरन वहाँ पहुँचा।

मुस्कान भरे जयसेन को देखते ही महाराज ने उससे कहा ''क्यों जयसेन, क्या अपनी बेटी को अकेले ही भेजने को सन्नद्ध हो?''

महाराज के इस प्रश्न पर लज्जित होते हुए जयसेन ने कहा ''यह सच है कि कल एक पिता के होने के नाते थोड़ा-बहुत अधिक ही मेरा अनुचित व्यवहार रहा है। प्रभू, आपके चले जाने के बाद मेरी बेटी ने मुझे आपका आशय समझाया। मैं और मेरा परिवार सदा आपकी सेवाएँ करने केलिए सन्नद्ध हैं। मेरी पुत्री शक्तिसेना शुक्ल चतुर्दशी के दिन ही निकलेगी और मार्ग-मध्य में ही राजकुमार से मिलेगी। उसे जो करना है, करेगी''।

सुषेण ने कहा ''जयसेन, मुझे इस बात की खुशी है कि तुम दोनों ने मेरी आशा और मेरे आशय को समझा है। किन्तु यह भी सुन लो कि मैं क्यों इतनी जल्दबाजी कर रहा हूँ।

मेरे पुरखे जयवर्मा ने यद्यपि हार खो दिया लेकिन बड़ी ही समर्थता से उन्होने राज्य का पालन किया। इसी कारण कोसल दक्षिणापथ में अग्रराज्य बनकर रह पाया है। वरुणदत्त अपने राज्य को भी विस्तृत करने की आकांक्षा रखता था, लेकिन उसमें वह सफल हो नहीं पाया, क्योंकि वह महामूर्ख था।

उसकी मूर्खता के कारण से कांभोज की पर्याप्त अभिवृद्धि हो नहीं पायी। अपने आख़िरी दिनों में वरुणदत्त को अपने गुप्तचरों के द्वारा यह मालूम हो गया कि जो हार नर्तकी ले आयी है, वह नक़ली है। उसे यह भी मालूम हुआ कि वृद्ध राजा ने उस हार को कहीं छिपा रखा है। उस दिन से कांभोज राजा, कोसल राजाओं के शत्रु बने हुए हैं। दिन-व-दिन वह शत्रुता बढ़ती आ रही है। मौक़ा

अब हमारे बंदी हैं। इससे ना ही उसे भय हुआ और ना ही उसने अपने प्रयत्न रोक लिये। मालूम हुआ कि गरुडदत्त उस पत्र को हस्तगत करने के लिए नयी-नयी योजनाएँ बना रहा है। लेकिन सही रूप से मालूम नहीं हो पाया कि वह योजना क्या है?

इन परिस्थितियों में अच्छा तो यही होगा कि जितनी जल्दी हो सके, वह हार हम पा लें। फिर हम कांभोज पर हमला करेंगे। महान गुरु कृष्णचंद्र ने आश्रम से राजकुमार के निकलने का मुहूर्त निकाला है। इस महत्वपूर्ण कार्य का आरंभ भी इसी मुहूर्त पर हो तो अच्छा होगा। इसीलिए मैंने गुरुकुल से निकले कीर्तिसिंह को पूरब की दिशा में भेजने की सोची है। जब से मैंने तुम्हारी पुत्री का बुद्धिकौशल और तीक्षणता देखी है, तब से मुझे लगा कि दोनों मिल जाएँ तो सोने में सुहाग हो जायेगा। यह सब उसी का परिणाम है। अब बोलो, तुम्हारी सारी शंकाओं का निवारण हो गया?"

मिलते ही कैसे भी हो, वह हार प्राप्त करने की कोशिश में लगे हुए हैं। जब कोसल राजाओं को ही पता नहीं कि हार कहाँ है, तो भला वे कैसे जान पाएँगे? जानने की कोई गुँजाइश भी तो नहीं है।

आजकल कांभोज का राजा है वरुणदत्त का वारिस गरुडदत्त। हमारे गुप्तचरों का कहना है कि अपने पिता और दादाओं से भी अधिक उसकी दृष्टि उस हार पर है। वह रात-दिन इसी हार को पाने की कोशिश में लगा हुआ है। हार ना सही, कम से कम विचित्रवर्मा के लिखे गये पत्र को पाने के प्रयत्न में वह संलग्न है। गरुडदत्त इस पत्र को पाने के लिए ज़मीन-आसमान एक कर रहा है। उसी प्रयत्न में भेजे गये तीन-चार गुप्तचर

सिर हिलाते हुए जयसेन ने कहा "प्रभू, क्या राजकुमार को उस हार के संबंध में कुछ मालूम है?"

"वह तो इतना ही जानता है कि पूर्वजों का वह अपूर्व हार कहीं गुप्त रखा गया है। इससे ज़्यादा और कुछ नहीं जानता"। कहते हुए सुषेण ने अपने वस्त्रों में छिपाया हुआ वह पत्र निकाला और उसे जयसेन को देते हुए कहा "यह अपनी पुत्री को देना। पूरे विवरण बताना और उससे

अवश्य ही अपने कार्य में सफल होगी। लेकिन बातों-बातों में मैंने कह दिया कि अगर वह जीत जायेगी तो उसे बहू बनाऊँगा। कीर्तिसिंह इस संबंध में कुछ जानता भी नहीं है। पता नहीं, शक्तिसेना के बारे में उसके क्या विचार होंगे, वह क्या निर्णय लेगा? वचन देकर मैंने उस युवती के हृदय में आशा जगा दी। अगर मेरा वचन व्यर्थ हो जाए तो मालूम नहीं, शक्तिसेना पर क्या गुज़रेगी। मेरे वचन का क्या होगा? अगर मैं उससे केवल बता देता कि तुम यह काम पूरा करो तो अच्छा होता''।

पति की बातों पर वैष्णवदेवी हँस पड़ी और बोली ''बताइये तो सही कि आकाश के राजा और रानी कौन हैं?''

महारानी के इस अर्थहीन प्रश्न पर आश्चर्य प्रकट करते हुए महाराज ने कहा ''यह भी कोई प्रश्न हुआ?''

वैष्णवीदेवी हँसती ही रही और बोली ''मेरा यह प्रश्न समयानुकूल प्रश्न ही है। मेरे इस प्रश्न का उत्तर हमारे पुत्र और होनेवाली पुत्रवधु को ही मालूम है''।

''होनेवाली पुत्रवधु? किसकी बात कर रही हो?'' सुषेण ने और आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

''और कौन? शक्तिसेना ही हमारी पुत्रवधु होगी।'' एक क्षण रुककर बोली ''क्या आप भूल गये कि शत्रुसेना और हमारा पुत्र बचपन के दोस्त हैं। कीर्तिसिंह अब भी उसे भूला नहीं है।

कहना कि यह राजकुमार को दे। सावधानी बरते। इसके बाद क्या करना होगा, उन्हीं पर छोड़ देंगे।''

जयसेन ने वह पत्र लिया और अपने वस्त्रों में छिपाये वहाँ से चल पड़ा।

आधी रात हुई, किन्तु महाराज सुषेण सोया नहीं था। वह अशांत अपने शयन-गृह में इधर-उधर घूम रहा था। अपने पति की इस स्थिति को देखकर उसकी पत्नी वैष्णवीदेवी ने बड़ी आतुरता से इसका कारण पूछा।

महाराज ने बिना कुछ छिपाये पूरा वृत्तांत बताया और शक्तिसेना के बारे में भी बताते हुए कहा ''मुझे इसकी चिंता नहीं कि शक्तिसेना को अकेली भेज रहा हूँ। वह समर्थ युवती है।

जब-जब मैं उसे देखने गुरुकुल गयी, तब-तब वह उसके बारे में पूछता रहता है, उसके कुशलक्षेम की बातें जानता रहता है। शक्तिसेना भी चुपचाप आपके सौंपे गये काम पर जा रही है, जिसका कारण भी कीर्तिसिंह ही है। आप निश्चिंत रहिये। शक्तिसेना ही हमारी होनेवाली बहू है''।

रानी की बातों से सुषेण को तसल्ली हुई और उसने पूछा ''अच्छा, अब बताओ, आकाश का राजा और रानी कौन हैं?''

देवी मुस्कुराती बोली ''मैं थोड़े ही बताऊँगी। विवाह के बाद हमारी बहू से ही पूछकर जान लीजियेगा''। महाराज ने अब आँखें बंद कर लीं और सोने के प्रयत्न में लग गया।

जब कोसल में यह सब कुछ हो रहा था, तब कांभोज में गरुडदत्त ने एक योजना बनायी। इस बार उसकी योजना में दो और भागीदार शामिल हुए। एक कोसल के उत्तरी भाग का नग देश का राजा नागकर्ण, जो गरुडदत्त का साला भी है। दूसरा नग तथा कांभोज के बीच के चाक्य देश का राजा कुँदनवर्मा।

गरुडदत्त ने अपने गुप्तचरों के द्वारा दो-तीन बार विचित्रवर्मा के पत्र को हथियाने की कोशिश की। लेकिन उसकी सब कोशिशें नाकाम हुईं। इस बार उसने निर्णय किया कि औरों की भी सहायता लेकर कोसल पर हमला करूँगा और उस हार को पाकर ही रहूँगा। हमला करने के पहले उसने अपने साले की सलाह माँगी, जो नगदेश का शासक था। नागकर्ण ने बताया ''चाक्य राजा भी यही चाहता है। इसलिए उसकी सहायता भी ली जाए तो उत्तम होगा। इस सम्मिलित सेना की शक्ति से हमारी जीत निश्चित है।'' फलस्वरूप तीनों की बैठक हुई। दीर्घ चर्चाएँ हुईं और सदृढ़ योजना बनायी गयी।
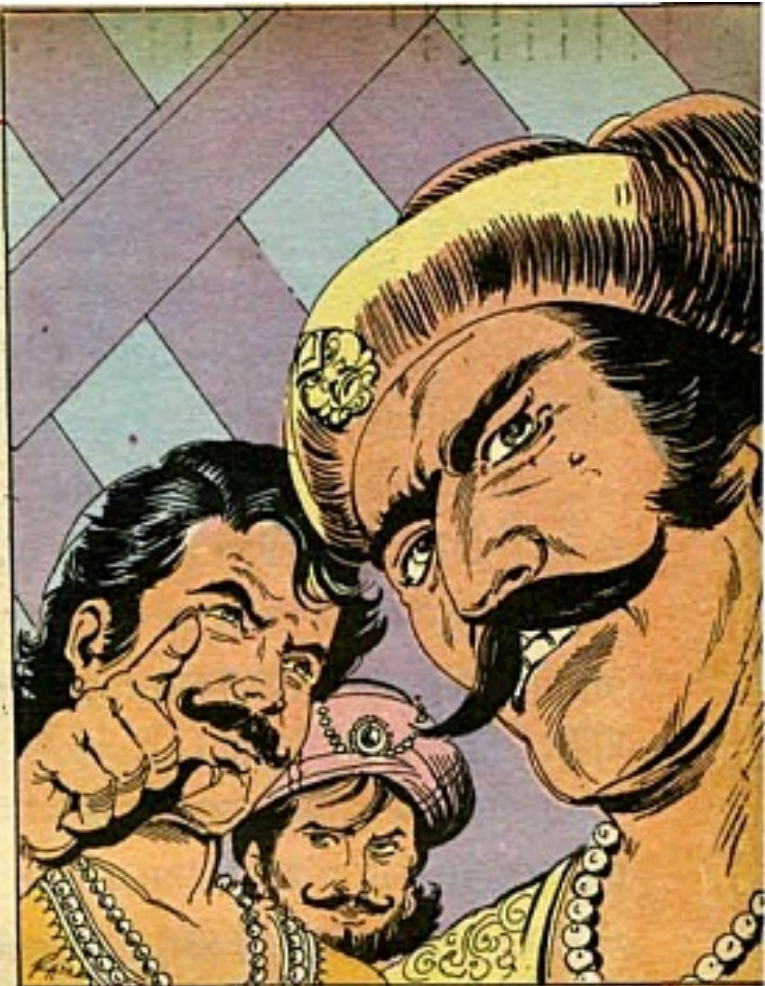
यह तय हुआ कि गरुडदत्त हार लेगा और बाकी दोनों कोसल को आधा-आधा बाँट लेंगे। यह तीनों का सम्मिलित निर्णय था, किन्तु हर एक का उद्देश्य ही कुछ दूसरा था। हर कोई हार का यजमान बनना चाहता था और साथ ही कोसल देश का राजा भी। गुप्त रूप से उन्होने इसके लिए अपनी-अपनी योजनाएँ भी बनायीं। उन्होने पहले कोसल को हस्तगत

करने की योजना बनायी। इस योजना को प्रस्तुत करते हुए नागकर्ण ने कहा "हम अवश्य ही इसे स्मरण रखें कि हमारी सम्मिलित सैन्य-शक्ति अकेले कोसल राज्य की सैन्य-शक्ति के समान है।"

"और एक बात भी है। कल कृष्ण पौड्यमी के दिन कीर्तिसिंह गुरुकुल से निकल कर राजधानी आनेवाला है। अगर वह सेनाधिपति बनाया गया, तो हम उसका मुक़ाबला नहीं कर पायेंगे।" कुंदन वर्मा ने कहा।

गरुडदत्त ने कहा कि अच्छा यही होगा कि हम पहले उस कीर्तिसिंह को ख़तम कर दें।

बाक़ी दोनों ने आतुर हो पूछा "यह कैसे संभव है?"

"तीन-चार सुदृढ़ सैनिकों को भेजकर मार्ग में ही छिपे-छिपे उसकी हत्या करा देंगे। जब सारा कोसल देश उसके मरण के शोक में डूबा रहेगा, तब हम उसपर अकस्मात हमला कर देंगे। बस, हमारा काम आसानी से पूरा हो जायेगा" गरुडदत्त ने कहा।

"इससे भी बढ़िया एक और उपाय है। कीर्तिसिंह को रास्ते में ही बंदी बना देंगे। उसके पिता को समाचार भेजेंगे कि हार के देने पर ही उसका पुत्र उसे मिलेगा। उसे यह धमकी भी देंगे कि हार ना मिलने पर उसका पुत्र मारा जायेगा"। नागकर्ण ने कहा।

"हाँ, यही सही उपाय है। हम भी नहीं जानते कि वह हार कहाँ है? राजा सुषेण अपने बेटे को अपनी जान से भी ज़्यादा चाहता है। अगर कीर्तिसिंह को हमने मार डाला तो उस हार के रहस्य का भी वह ध्वंस कर देगा। हम हार के बारे में अंधेरे में रह जाएँगे। बेटे की जान के लिए वह हार भी दे देगा। जब वह हार हमारे हाथ लगेगा, तब कीर्तिसिंह की हत्या कर देंगे।" कुंदनवर्मा ने अपना तर्क प्रस्तुत किया।

बाक़ी दोनों ने उसके तर्क को स्वीकार किया। उन्होने निर्णय कर लिया कि तीन सदृढ़ सैनिकों को भेजकर कीर्तिसिंह को बंदी बनाएँगे और उसे काँभोज ले आयेंगे।

(सशेष)
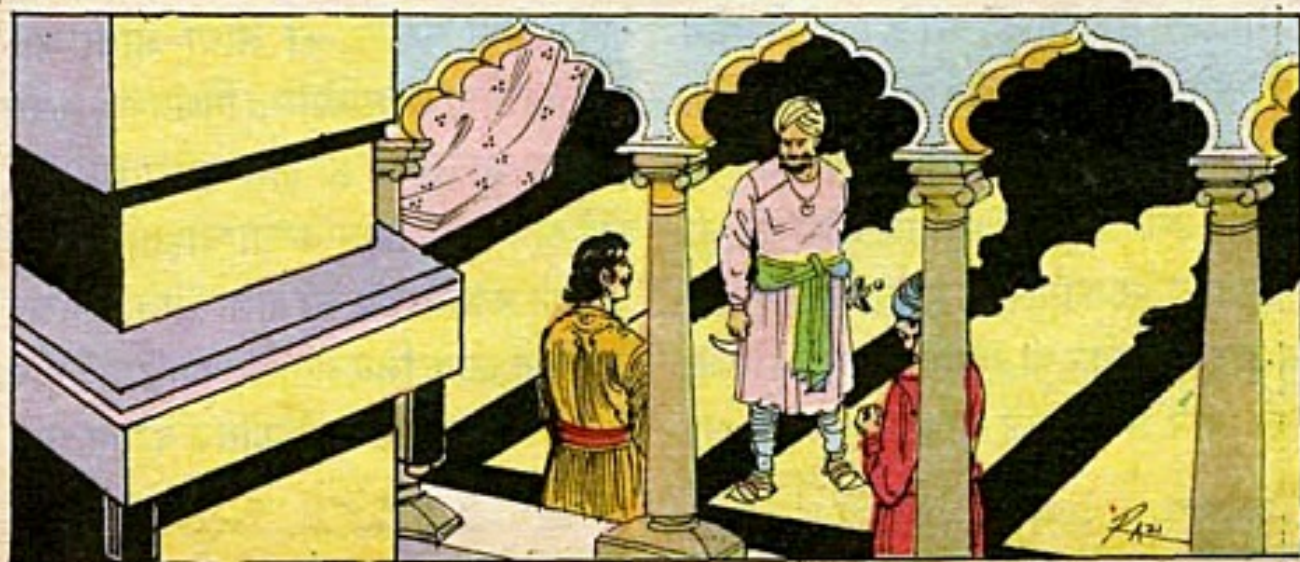
प्रभावशाली रत्न

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और अपनी भुजाओं पर ड़ाल लिया। यथावत् वह श्मशान की ओर बढ़ा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, घनघोर अंधकार है। यहाँ इस श्मशान में सियार हैं, पिशाच हैं, पता नहीं और क्या-क्या जानवर हैं। वे किसी भी क्षण तुमपर आक्रमण कर सकते हैं। यहाँ तुम्हारा प्राण सुरक्षित नहीं। किसी भी क्षण तुम उनका शिकार बन सकते हो। किन्तु तुम निधडक चले जा रहे हो। अनेकों बार तुम अपने काम में विफल रहे हो, किन्तु तुम्हें निराशा छू तक नहीं गयी है। लगता है, तुम आशाजीवी हो। तुम्हारा व्यक्तित्व विलक्षण लगता है। तुम्हें देखते हुए मुझे आश्चर्य हो रहा है। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि आख़िर तुम पाना क्या चाहते हो? किस कार्य की सिद्धि के लिए इतनी कठोर यातनाएँ झेल रहे हो? मैं तो भली-भांति जानता हूँ कि तुम

बैताल कथा

उत्तम शासक हो। तुम्हें सुख-संपदाओं की कोई कमी नहीं। अगर कोई ईर्ष्यालू पराया राजा तुम पर आक्रमण भी करे तो डटकर उसका मुक़ाबला कर सकते हो, उसको परास्त कर सकते हो। तुम्हें इसके लिए दूसरों की सहायता की भी आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे जैसे वीर, पराक्रमी राजा तो सदा अपनी शक्ति पर ही आधारित रहते हैं। किन्ही क्षुद्र देवताओं की शरण में नहीं जायेंगे, उनकी पूजा नहीं करेंगे। हाँ, एक बात अवश्य है, जिसको पाने के लिए शायद तुम ये सारे कष्ट झेल रहे हो। लगता है तुम किसी स्त्री के प्रेम-बंधन में बंधे हुए हो। तब तो विषम समस्याएँ उत्पन्न तो होगीं ही। अगर तुम ऐसी समस्याओं के उलझन में उलझे हुए हो और उस समस्या का हल चाहते हो तो मैं नहीं समझता कि कल्याणीनगर के युवराज की तरह आख़िर क्षणों में तुम अविवेक पूर्ण काम कर बैठोगे। जो भी हो, मैं तुम्हारा हित चाहता हूँ, तुम्हें सावधान करना चाहता हूँ, इसलिए उस युवराज की कहानी तुम्हें सुनाऊँगा। कहनी सुनते जाओ और अपनी थकान भी दूर करते जाओ'' यों कहकर उसने कल्याणनगरी के युवराज की कहानी यों सुनायी।

कल्याणीनगर का शासक था कनकदत्त। उसका इकलौता बेटा मोहनगुप्त बहुत ही बुद्धिमान था। उसकी दृष्टि बहुत ही पैनी थी। जटिल से जटिल समस्या का वह समाधान ढूँढ़ निकाल पाता था। ऐसे योग्य युवराज को अपना दामाद बनाने की चाह भी बहुत से अड़ोस-पड़ोस के राजाओं को थी और यह स्वाभाविक भी है। उन्होने अपनी-अपनी पुत्रियों की तस्वीरों को कल्याणनगरी भेजा। किन्तु किसी भी राजकुमारी का चित्र उसे आकर्षित कर नहीं पाया। वह किसी भी कन्या पर मुग्ध नहीं हुआ।

राजसभा का चित्रकार रविवर्मा, मोहनगुप्त का जिगरी दोस्त था। दोनों एक ही उम्र के थे। कभी-कभी मन बहलाने के लिए युवराज रविवर्मा के चित्र-मंदिर में जाया करता था। एक दिन जब युवराज वहाँ पहुँचा, तब उसने देखा कि रविवर्मा एक चित्र के सामने खड़ा है और उसे रंगों से सजा रहा है।

वह चित्र एक अद्भुत सुँदरी स्त्री का चित्र

था। उस चित्र को देखकर मोहनगुप्त स्तब्ध रह गया। उसकी आँखें उस चित्र से हटने का नाम नहीं ले रही थीं। उसने रविवर्मा से कहा "दोस्त, यह सुँदरी केवल तुम्हारी कल्पना है अथवा इसको क्या कहीं तुमने अपनी आँखों देखा है?"

युवराज के इस प्रश्न पर मुस्कुराता हुआ रविवर्मा बोला "जिस सुँदरी का चित्र मैंने खींचा है, वह इस नगर में रहती है। नाम है स्वप्नरेखा। एक साधारण किसान की बेटी है। अविवाहिता है"।

यह सुनते ही मोहनगुप्त के आनंद का आर-पार ना रहा। उसने कहा "वाह, ऐसी अद्भुत सुँदरी से मैं विवाह नहीं कर पाऊँगा तो मेरा जीवन व्यर्थ है"।

उस रात को वह सो नहीं सका। पलंग पर करवटें बदलता रहा। आँखें बंद हो या खुलीं, स्वप्नरेखा ही उसे दिखायी दे रही थी। बड़ी मुश्किल से उसने रात गुज़ारी। सवेरा होते-होते उसे नींद आने लगी।

वह घना जंगल है। कोई मांत्रिक बाघ पर सवार होकर जा रहा है। उसपर स्वप्नरेखा जैसी एक युवती भी बैठी हुई है। मोहनगुप्त घोड़े पर चढ़कर उसका पीछा कर रहा है। घोड़े और बाघ के बीच में दूरी है। घोड़े को वह तेज़ चला रहा है, परंतु बाघ तक पहुँच नहीं पा रहा है। उस मांत्रिक की आयु पच्चीस होगी। काफ़ी हट्टा-कट्टा दीख रहा है। बहुत ही दृढ़ लग रहा है। काली दाढ़ी है, बायें हाथ में मंत्रदंड है। गले में रुद्राक्षमाला के साथ-साथ सोने की जंजीर में लटक रहा एक लाल रत्न भी है।

थोड़ी दूर जाने के बाद मांत्रिक ने उस बाघ को एक पेड़ के पास रोका। बग़ल में ही एक पहाड़ी गुफ़ा है। मांत्रिक जब गुफ़ा में प्रवेश करने लगा तो बाघ और वह युवती भी उसके पीछे-पीछे जाने लगे।

मोहनगुप्त हठात् नींद से जागा। उसने देखा कि वह अंत:पुर की शय्या पर लेटा हुआ है। अब वह समझ गया कि यह निरा सपना है।
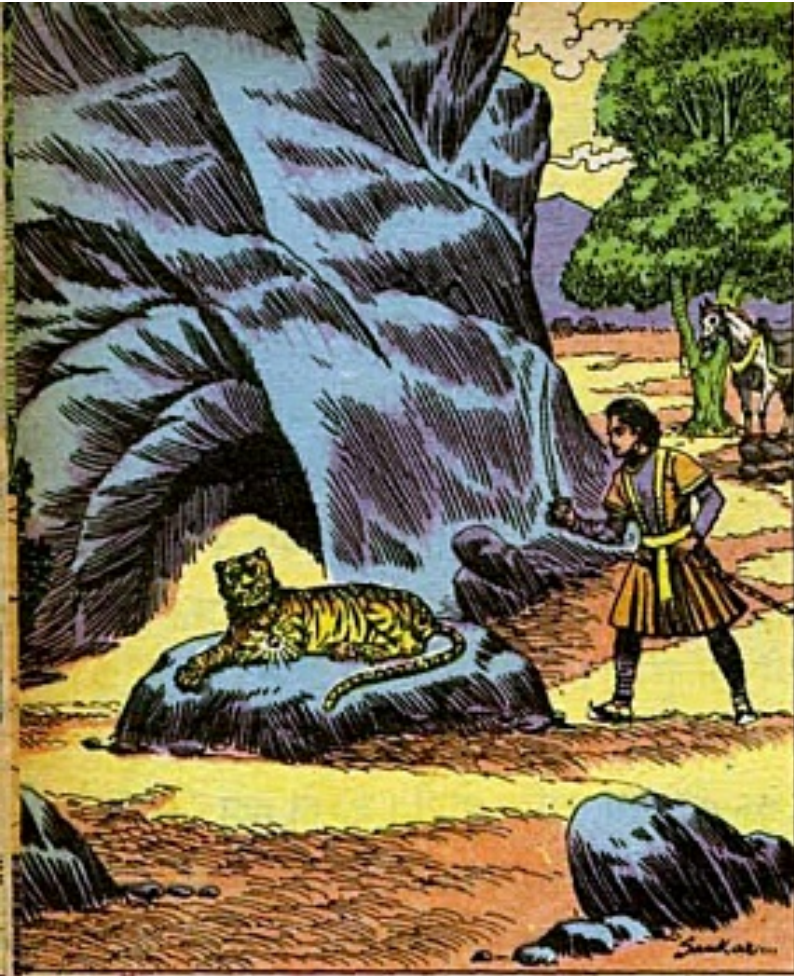
दिन के चढ़ते-चढ़ते नगरवासियों से यही बात सुनने में आयी कि व्याघ्रदीप नामक एक मांत्रिक स्वप्नरेखा को उठाकर ले गया, जिसे उसने सपने में देखा था। यह जानकर मोहनगुप्त को बहुत दुख हुआ। कहा गया है कि व्याघ्रदीप बहुत बड़ा शक्तिवान मांत्रिक है और उसके पास सम्मोहन शक्ति से भरपूर एक रत्न भी है। लोग तो यह कहते थकते भी नहीं थे कि उस रत्न के प्रभाव से वह किसी को भी अपने आकर्षण में जकड़ सकता है।

यह सब कुछ सुनने के बाद मोहनगुप्त को लगा कि कल रात को मैंने जो सपना देखा, वह सपना नहीं, बल्कि वास्तविकता है। वह सोच-विचारकर एक निर्णय पर आया, और किसी से कहे बिना घोड़े पर बैठकर जंगल निकल पड़ा।

दुपहर तक वह उस जगह को ढूँढ़ता रहा, जिसे उसने सपने में देखा था। एक जगह पर उसने बरगद का एक पेड़ देखा। बग़ल में ही एक गुफ़ा भी थी। मोहनगुप्त घोड़े से उतरा और गुफ़ा की तरफ़ बढ़ा।

गुफ़ा के सामने बाघ ऊँघ रहा था। व्याघ्रदीप के गले में जो रत्न दिखायी पड़ा, अब वह उस बाघ के गले में लटक रहा है। उसके पैरों की आहट सुनकर वह जागे, उसके पहले ही मोहन गुप्त ने अपनी तलवार से उसका सर काट दिया।

मोहनगुप्त ने फ़ौरन उस प्रभावशाली रत्न को खींच लिया और अपने गले में डाल लिया। फिर थोड़ी दूर आगे बढ़ा और अंदर झाँककर देखा। उसने देखा कि बाघ की खालों से ढके एक आसन पर व्याघ्रदीप और स्वप्नदेखा एक दूसरे से दूर बैठे हुए हैं।

मोहनगुप्त सोच में पड़ गया कि अब मुझे क्या करना है? तब उसने व्याघ्रदीप की आवाज़ सुनी "स्वप्नरेखा, रत्न के प्रभाव से मैंने कितने ही

अद्भुत कार्य किये हैं। तुम्हें भी उसी के प्रभाव से तुम्हारे घर से ले आया हूँ। लेकिन मैं नहीं चाहता कि उसके प्रभाव का दुरुपयोग करके तुम्हें अपना बनाऊँ। इसीलिए रत्न को मैंने बाघ के गले में डाल दिया है। वह रत्न मेरे गले में ना हो तो मैं एक साधारण मनुष्य हूँ। तुम्हें पसंद हो तो अग्नि को साक्षी बनाकर शास्त्रीय-पद्धति से तुमसे विवाह करूँगा। तुम मुझसे शादी करने से इनकार करती हो तो मैं तुम्हारे घर सुरक्षित पहुँचाऊँगा''।

मांत्रिक की बातों से मोहनगुप्त विस्मित हुआ। उसने बड़ी उत्सुकता से दो क़दम यह सुनने के लिए आगे बढ़ाये कि स्वप्नरेखा क्या जवाब देगी? स्वप्नरेखा ने व्याघ्रदीप को एक बार ग़ौर से देखा और बोली ''आप अगर इन मंत्र-शक्तियों को त्याज देंगे और एक साधारण मनष्य की तरह समाज में रहना पसंद करेंगे तो आपसे विवाह करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं''।

मांत्रिक ने उसकी शर्त को स्वीकार करने के अंदाज में अपना सर हिलाया और उसका हाथ अपने हाथ में लेनेवाला ही था कि मोहनगुप्त बड़ी तेज़ी से उनके सामने आया।

''स्वप्नरेखा, ठहर जाओ। वह मांत्रिक दुष्ट है, नीच है। उससे विवाह मत करो। मैं इस देश का युवराज हूँ। मुझसे विवाह करोगे तो कल्याणी नगर की महारानी बनोगी।'' मोहनगुप्त ने कहा।

रत्न के प्रभाव के कारण स्वप्नरेखा मंत्रमुग्ध होकर उसके बग़ल में आकर खड़ी हो गयी।

इसे देखते हुए मांत्रिक ठठाकर हँसा। युवराज ने उसको नाराज़ी से देखते हुए पूछा ''यह कैसी विकृत हँसी? एक अबला को तुमने रत्न के प्रभाव से अपने अधीन किया है। तुम दुष्ट और नीच हो। तुम्हें कानूनन फाँसी पर चढ़ाने का अधिकार मुझे है, लेकिन मैं यह नहीं करूँगा। तुमपर दया करके तुम्हें छोड़ रहा हूँ।''

''क्या कहा? आपका अभियोग यही है ना कि मैंने इस अबला को रत्न के प्रभाव से अपने अधीन किया है? मैं दुष्ट हूँ, नीच हूँ।'' कहता हुआ वह फिर से ज़ोर से हँसने लगा।

मांत्रिक की बातों ने मोहनगुप्त को असमंजसता में डाल दिया। वह सोचने लग गया। सोचते-सोचते उसके मुख के रंग भी बदलते गये।

उसने गले में डाले हुए रत्न को ज़मीन पर पटक दिया। उसके टुकड़े-टुकड़े हो गये।

तब तक मोहनगुप्त के ही बग़ल में खड़ी स्वप्नरेखा चौंकती हुई बोली "ये कौन हैं, इनके बग़ल में मैं क्यों खड़ी हूँ?" यों अपने आप बड़बड़ाती हुई मांत्रिक के पास गयी। मोहनगुप्त ने एक क्षण का भी विलंब नहीं किया। वह वहाँ से चल पड़ा और घोड़े पर बैठकर राजधानी निकल पड़ा।

बेताल ने यह कथा सुनायी और कहा "महाराज मोहनगुप्त स्वप्नरेखा को बहुत चाहता है, उससे विवाह भी करने का निर्णय कर चुका है। इसीलिए उसने बाघ को मारा और रत्न भी पाया। इन परिस्थितियों में उसने बिल्कुल ही विपरीत किया है। उसने रत्न को ज़मीन पर पटककर फेंक दिया, उसके टुकड़े किये और स्वप्नरेखा को उस दुष्ट मांत्रिक के हवाले कर आया। इससे बढ़कर अविवेक और क्या हो सकता है? उस प्रभावशाली रत्न को फोड़ना निरी मूर्खता नहीं तो और क्या है? मेरे इन संदेहों का समाधान दो। जानते हुए भी चुप रहोगे तो तुम्हारा सर फट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा "मांत्रिक दुष्ट था, किन्तु स्वप्नरेखा के विषय में सभ्य नागरिक की तरह पेश आया। वह विश्वास करता था कि मंत्रतंत्रों से किसी स्त्री का प्रेम पाना नीच काम है, इसीलिए उसने रत्न भी बाघ के गले में डाल दिया। जब उसने रत्नधारी मोहनगुप्त को देखा और देखा कि उस रत्न के प्रभाव से ही स्वप्नरेखा उसके प्रति आकर्षित हुई है तो वह अपनी हँसी को रोक नहीं पाया। मोहनगुप्त को अपनी ग़लती मालूम हुई। उसने रत्न तुरंत ज़मीन पर पटक कर फोड़ दिया। क्योंकि वह नहीं चाहता कि वह रत्न किसी नीच के हाथ लगे। यह कहना नितांत असंगत है कि युवराज के व्यवहार में अविवेक है। उसका निर्णय न्यायसंगत है। उसकी समयस्फूर्ति प्रशंसनीय है।"

राजा का मौन-भंग होते ही बेताल शव को लेकर ग़ायब हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(आधार- स्वर्णलता की रचना)

इच्छा की पूर्ति

नागपुरके राजा समीर ने जब तक शासन-भार संभाला, प्रजा को सताया, उन्हें कष्ट पहुँचाया। मरण -शय्या पर पड़े उसमें प्रश्चात्ताप की भावना जगी। अपने किये पर उसे पछतावा होने लगा।

अपने आख़िरी क्षणों में उसने अपने पुत्र महेंद्र को बुलाया और उससे कहा "पुत्र, मेरे शासन-काल में प्रजा ने बहुत से दुख सहे हैं। वे मुझे माफ़ भी नहीं करेंगे। मैं तो यह नहीं जानता कि तुम क्या करनेवाले हो? लेकिन इतना तो मेरे लिए करो, जिससे प्रजा मेरे बारे में अच्छा कहे। ऐसा नहीं हुआ तो मेरी आत्मा अशांत ही रहेगी।" कहकर वह मर गया।

महेंद्र का स्वभाव तो पिता के स्वभाव से बिलकुल भिन्न था। वह बहुत ही दयालू था। उसने खूब सोचा-विचारा और अपने पिता के नाम पर उसने नगर में एक उचित भोजनालय तथा विद्यालय का निर्माण करवाया।

कुछ दिनों के बाद अपना वेष बदलकर महेंद्र पहले भोजनालय के पास गया। वहाँ हज़ारों लोगों के भोजन का प्रबंध ज़ोर-शोर से हो रहा था। यद्यपि बहुत-से लोग चाव से भोजन कर रहे थे, फिर भी उनके चेहरे कांतिहीन थे। उनके मुखड़ों पर कोई कमी महसूस हो रही थी। यह देखकर महेंद्र ने एख आदमी से पूछा तो उसने कहा "कहने को क्या है? इतना उत्तम कार्य हो रहा है, परंतु क्या फ़ायदा। यह भोजनालय तो प्रजा के शत्रु के नाम पर बना है। खाते-खाते लगता है कि दातों में कंकड अटक गये हों, खाने पर शायद ना पचे।"

महेंद्र उसकी बातों से दुखी हुआ। वह वहाँ से सीधे विद्यालय गया। उसने देखा कि वहाँ सब अध्यापक ही अध्यापक हैं, कोई भी विद्यार्थी है ही नहीं।

चकित महेंद्र ने अध्यापक से इसका कारण पूछा तो उस अध्यापक ने कहा "महाशय,

कमलेश पाँडे

विद्यार्थियों के माता-पिताओं का विचार है कि समीर के नाम पर निर्मित इस विद्यालय में पढ़ने से उनके बच्चों में बुराई घर कर जायेगी। इसीलिए वे अपने बच्चों को यहाँ पढ़ाने के लिए भेजने से इनकार कर रहे हैं''।

उसके उत्तर से महेंद्र और भी चिंतित हो गया। उसने उसी दिन भोजनालय और विद्यालय को बंद कर देने का आदेश दिया। क्रमशः राजा संबंधी कार्य-कलापों में व्यस्तता के कारण अपने पिता की इच्छा ही भूल गया।

कुछ समय बाद महेंद्र ने सपने में देखा कि उसके पिता समीर आँसू बहाते हुए खड़े हैं।

प्रातःकाल महेंद्र ने अपने मंत्री से रात के सपने का ज़िक्र किया। मंत्री ने कहा ''इसका तो अर्थ यही हुआ कि आपके पिताजी आपसे अनुरोध कर रहे हैं कि मेरी इच्छा की पूर्ति करो।''

उस दिन से महेंद्र जनोपयोगी कितने ही कार्य कराने लगा। राज्य में कर कम कर दिये गये। वसूली में ढिलायी दिखायी जाने लगी। कितने ही विद्यालय खुले। भोजनालयों का आरंभ हुआ। ग्रामीणों की सुविधाओं के प्रबंध किये गये।

इससे बहुत ही कम समय में महेंद्र की ख्याति फैली। लोग उसकी भरपूर प्रशंसा करने लगे। मंत्री ने राजा समीर की कांस्य मूर्तियाँ बनवायीं और नगर के विभिन्न प्रदेशों में उनकी प्रतिष्ठापना की। इतना सब कुछ करने के बाद राजा और मंत्री बहुरूपियों के वेष में लोगों के अभिप्राय जानने के लिए नगर में घूमने गये।

घूमते-घूमते एक छोटे-से शहर के केंद्र-स्थान पर गये। पड़ोस के देश का एक नागरिक मूर्ति दिखाते हुए एक आदमी से पूछ रहा था कि यह मूर्ति किसकी है? नागरिक ने खुशी से कहा ''यह हमारे भगवान समान राजा के पिता समीर की मूर्ति है। उन्हीं के आशीर्वाद के कारण हमें ऐसा उत्तम राजा मिला है''।

महेंद्र की खुशी का ठिकाना ना रहा। इतने दिनों के बाद लोगों के मुँह से अपने पिता की प्रशंसा सुनकर उसे हर्ष हुआ। उसे लगा कि पिता की इच्छा पूरी करने में मैं सफल हुआ हूँ।
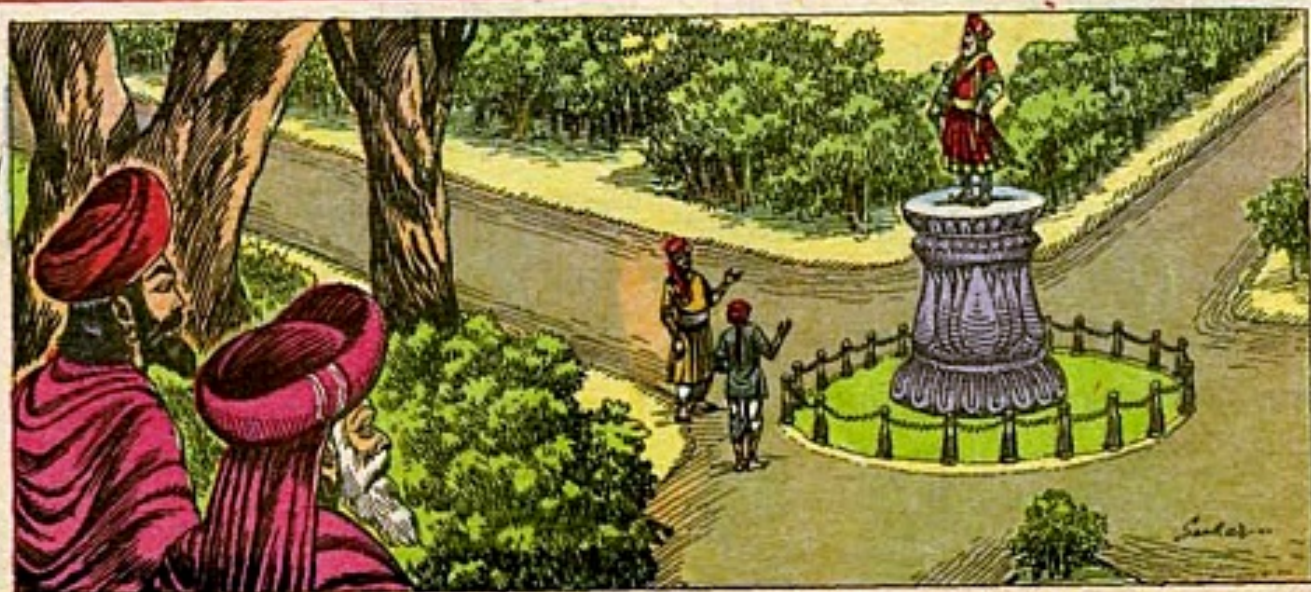
चन्दामामा परिशिष्ट - ६९

हमारे देश के वृक्ष

नारियल का पेड़

नारियल के पेड़ को कल्पवृक्ष कहते हैं। विष्णु के अवतारों में से परशुराम भी का एक अवतार है। दुष्टों को समुचित दंड देने के बाद गोकर्ण नामक पर्वत-शिखर से उन्होने अपनी कुल्हाड़ी समुद्र में फेंक दी। कहा जाता है कि जहाँ कुल्हाड़ी गिरी, वहाँ के अंतराल से भूभाग ऊपर निकल आया। तब परशुराम स्वर्ग से नारियल का पौधा ले आये और उस भूभाग में रोपा। वह प्राँत गोकर्ण से कन्याकुमारी तक व्याप्त है। और यह प्राँत भविष्य में नारियल के पेड़ों से भरे केरल के रूप में सुप्रसिद्ध हुआ। एक पुराण गाथा में इसका ऐसा उल्लेख है। केरल का ऐसा भी अर्थ है-नारियल के पेड़ों की भूमि।

नारियल को हिन्दू बहुत पवित्र मानते हैं। बिना नारियलों के पूजाएँ, विवाह आदि शुभ कार्य संपन्न नहीं होते।

समुद्री तटों के प्रदेशों में नारियल के पेड़ खूब बढ़ते हैं। इसीलिए समुद्री तटों पर बसनेवाले लोगों के जीवन में नारियल का प्रमुख स्थान है। वे त्योहारों व उत्सवों में इनका अधिकाधिक उपयोग करते हैं। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र में जब वर्षा ऋतु समाप्त होती है, तब 'नारियल दिवस' नामक त्योहार मनाया जाता है। उस समय वे वरुणदेव को नारियल फोड़कर अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

अठारह से पच्चीस मीटरों की ऊँचाई तक ये पेड़ बिना शाखाओं के बढ़ते हैं। इन पेड़ों पर बड़े-बड़े पतले पत्ते होते हैं। पत्ते दोनों ओर होते हैं। एक एक पत्ते की चौड़ाई लगभग २.५ मीटर तक होती है। ये पत्ते बहुत ही कोमल होते हैं। ये पीले रंग के होते हैं और सिकुड़े हुए होते हैं। जब वे बड़े होकर खिलते हैं तो पक्के हरे रंग में होते हैं। पत्तों के तनों में पीले फूल विकसित होते हैं और उनमें घौदों में नारियल लटकते रहते हैं।

नारियल के उपयोग के संबंध में अधिक कुछ कहने की ज़रूरत तो है नहीं। खोपर कोमल होता है। जब वह पक्का हो जाता है, तब दृढ़ हो जाता है। खोपर से तेल निकाला जाता है। नारियल का पत्ता, रग-रेशा, रेशा, गुठली आदि नारियल के पेड़ का हर भाग उपयोग में आता है। इसलिए व्यापारिक दृष्टि से इसका मूल्य व महत्व है। इसे कल्पवृक्ष कहने का यह भी कारण है।

पवित्र बाइबिल

बाइबिल ईसाइयों का पवित्र धर्म-ग्रंथ है। इसके दो भाग हैं :- पूर्व विधान (ओल्ड टेस्टमेंट) नव विधान (न्यू टेस्टमेंट)। पूर्व विधान में मानव जाति के प्राचीन इतिहास के विवरण हैं। हिब्रू भाषा बोलनेवाले यहूदी इस इतिहास में विश्वास रखते हैं। जुडाइज़म नामक प्राचीन धर्म को इन्होने अपनाया है। ईसाई भी इस इतिहास को मानते हैं। इस पूर्व विधान की कथाओं तथा सूक्तियों को वे पवित्र मानते हैं।

नवविधान में ईसा के उपदेश हैं। साथ ही यह 'अपोजल्स' तथा अन्य शिष्यों के महत्वपूर्ण कार्यो के तथा उनकी सेवाओं का संग्रह है।

सृष्टि के आदि के संबंध में पूर्व विधान यों कहता है "भगवान ने स्वर्ग तथा भूमि की सृष्टि का कार्य जब आरंभ किया तब भूमि का कोई निश्चित आकार नहीं था। वह अस्तव्यस्त ढ़ेला थी। काला भाप उगलती भी। दैवशक्ति उसपर हावी हो गयी।"

पूर्व विधान में राजा और तथा महात्माओं के बारे में कई अपूर्व गाथाएँ हैं। ईजप्ट में यहूदियों ने नाना प्रकार की यातनाएँ सही हैं। वहाँ से निकलकर इज़राइल पहुँचने के लिए उन्होने अनगिनत कष्ट सहे। उनकी पीड़ाएँ वर्णनातीत थीं। आखिर मोसन उनको वहाँ से ले जाने में सफल हुआ। इन घटनाओं के विवरण भी पूर्व विधान में सविस्तार मिलते हैं।

पूर्व विधान में अनुभव से भरी कितनी ही गाथाएँ हैं; सदाचार की कहानियाँ हैं। उदाहरण के लिए अपव्ययी पुत्र की कहानी भी इसी में है। फिज़ूल खर्च करनेवाले एक युवक ने अपने पिता से झगड़ा किया और अपना हिस्सा लेकर अलग चला गया। अपव्यय करके जो भी था, खो दिया। उसे तरह-तरह की

तक़लीफ़ें झेलनी पड़ीं। जब और कोई चारा नहीं था तो वह अपने ही पिता के यहाँ नौकरी करने लौटा। उसे भय था कि पिता उसे कोसेंगे, दंड देंगे। लेकिन पिता ने बड़े प्रेम से उसे अपनाया। पुत्र को पिता का प्रेम पाकर लगा, मानों उसे नया जन्म मिल गया हो।

नवविधान में ईसा के उपदेश हैं। ईसा ने अपने अनुचरों को हितबोध किया ''वे दूसरों से प्रेम करें विनय से व्यवहार करें, सहनशक्ति जीवन का अभिन्न अंग बना रहे।'' उन्होने कहा ''कोई एक चपत पर तमाचा मारे तो दूसरा चपत भी उसे दिखाया जाए। क्षमा करने का यह सद्‌गुण मनुष्य की शोभा है।'' उन्होने यह भी कहा ''हम सब अज्ञानी हैं, इसलिए दूसरों के संबंध में तथा उनके कार्य-कलापों पर हमें उँगली उठाने का कोई हक़ नहीं है। हमें न्याय-निर्णय का कोई अधिकार नहीं। यह गर्व कदापि अनुचित है कि हम सर्वज्ञानी हैं।''

ईसा ने चेतावनी दी कि हमें ऐसे लोगों से जागरूक रहना चाहिये, जो 'अद्‌भुत' करने का दावा करते हैं। कपटी प्रवक्ताओं से भी हमें दूर रहना चाहिये। भगवान पर जो दृढ़ विश्वास है, वह ठोस बुनियाद के समान है। ऐसे लोगों का जीवन उस सुरक्षित घर के समान है, जिनका घर पहाड़ी पथ्थरों की बुनियाद पर निर्मित हुआ है। विश्वासहीन मानवों के घर रेत पर बनाये गये घरों की तरह हैं, जो किसी भी क्षण टूट सकते हैं। ना ही वे तूफ़ानों का सामना करने की शक्ति रखते हैं या ना हीं किसी कंपन का।

संसार में अत्यधिक प्रचलित ग्रंथों में से प्रधान ग्रंथ है बाइबिल। विशेष बात तो यह है कि केवल ईसाई ही नहीं, बल्कि अन्य धर्मों के लोग भी इसका पठन करते हैं।
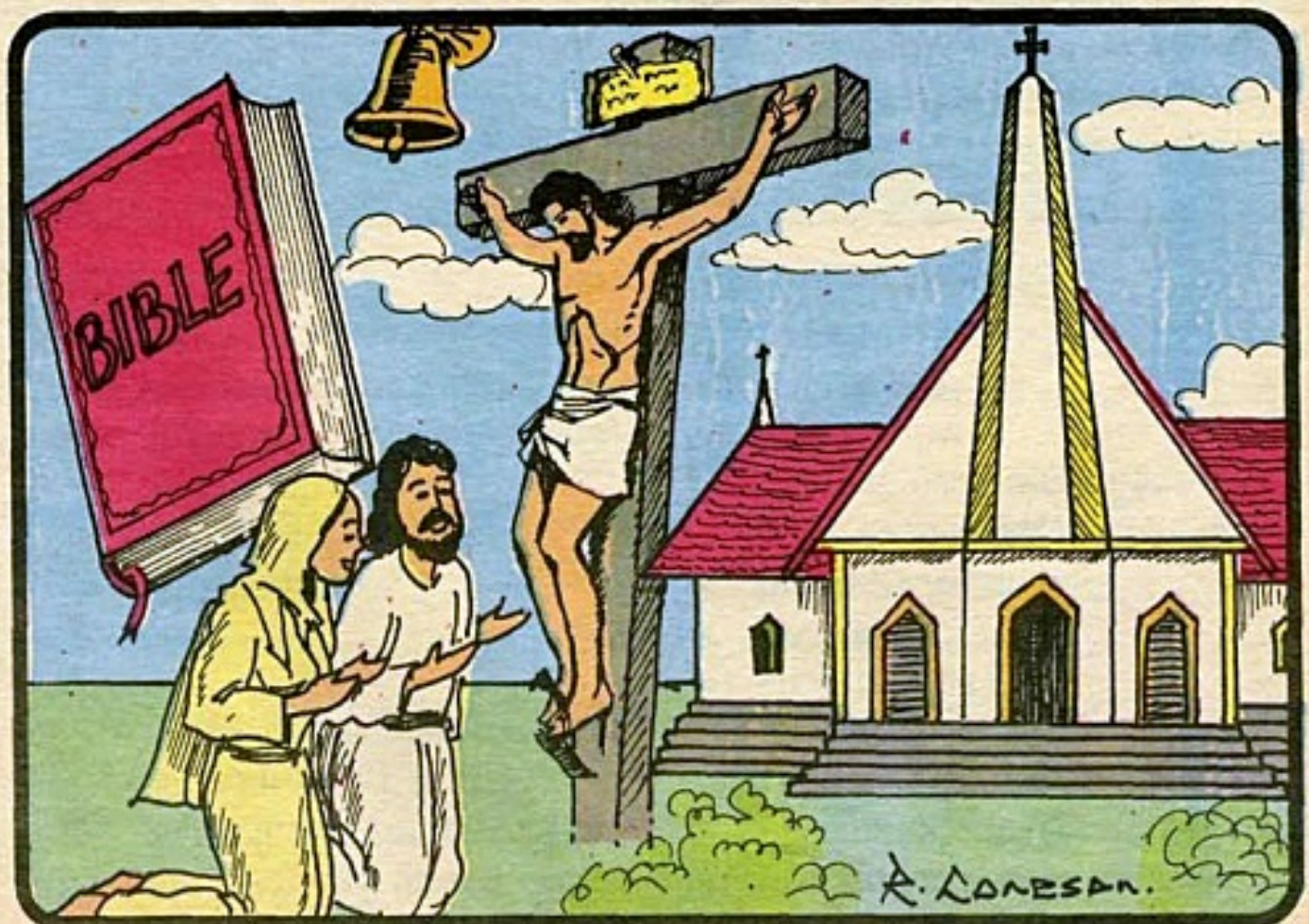
क्या तुम जानते हो?

१. श्रीहरिकोटा किस प्रांत में है? हाल ही में वह क्यों प्रसिद्ध हुआ?
२. ओलंपिक चिह्न में पाँच लकीरें हैं। उनके क्या-क्या रंग हैं?
३. हमारे देश का प्रथम सिनिमा थियेटर कौन-सा है। कहाँ और कब इसका निर्माण हुआ?
४. न्यूयार्क नगर एक नदी मुख में बसा हुआ है। उस नदी का क्या नाम है?
५. आर्यसमाज के स्थापक का क्या नाम है?
६. संसार-भर में सब से बड़ा समुद्र कौन-सा है? सबसे बड़ा महासागर कौन-सा है?
७. संयुक्त राष्ट्र-संघ की प्रथम महिला अध्यक्षा कौन थीं?
८. सीने की मशीन का आविष्कार किसने किया?
९. जंतर-मंतर का अर्थ क्या है? वह क्यों प्रसिद्ध हुआ?
१०. एक सामान्य कन्या से विवाह करने के लिए किस ब्रिटिश राजा ने अपने सिंहासन को ठुकरा दिया?
११. साहित्य अकादमी, संगीत नाटक अकादमी तथा ललितकला अकादमी के प्रधान कार्यालय एकही भवन में हैं। उसका नाम क्या है और वह कहाँ है?
१२. अफ्रीका का सबसे बड़ा शहर कौन-सा है?
१३. 'विजार्ड आफ हाकी' के नाम से प्रसिद्ध व्यक्ति कौन हैं?
१४. हमारे देश में सर्वप्रथम प्रकाशित समाचार-पत्र कौन-सा है? कहाँ से वह प्रकाशित हुआ?
१५. दादा साहेब फाल्के पुरस्कार किन्हें पहले पहल मिला?
१६. मार्क टवेन का असली नाम क्या है?
१७. 'रिज़र्व बाँक आफ इंडिया' कब स्थापित हुआ?

उत्तर

१. आँध्र प्रांत के समुद्री तट पर है। रोहिणी एस.एल.वी. प्रक्षेपास्त्र का प्रयोग यहीं से हुआ।
२. नील, काला, लाल, पीला, हरा।
३. एलिफ़िनस्टोन पिक्चर पालेस, बंबई, १९०७ में।
४. हडसन्।
५. दयानंद सरस्वती।
६. चीनी समुद्र, पसफिक महासागर।
७. विजयलक्ष्मी पंडित, १९५३ में।
८. आधुनिक आकार में, १८६७ में, एलियास, आधार सूत्र के आविष्कारक थामस सेयंट, १७९० में।
९. जयपुर के राजा सनाय जयसिंग से जयपुर तथा दिल्ली में निर्मित दो नक्षत्र गणित शालाएँ। इनका उपयोग अंतरिक्ष के नक्षत्रों तथा ग्रहों का अध्ययन करने के लिए होता था।
१०. आठवाँ राजा एड्वर्ड।
११. रवींद्र भवन, नई दिल्ली।
१२. ईजप्ट की राजधानी कैरो।
१३. हमारे ही देश का ध्यानचंद।
१४. हिकीस गजेट, १७७९ में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ।
१५. देविकारानी रोरिक।
१६. शाम्युल क्लेमेन्स।
१७. १९३५ में।

मेहमान चोर

विराटपुर के विठ्ठल और सावित्री की नयी-नयी शादी हुई। सावित्री के माँ-बाप, उसके दादा, चाचा और उनका परिवार सब मिल-जुलकर एक ही घर में रहते थे। उसे सब चाहते थे, क्योंकि उस घर में वही एकमात्र लड़की थी। जब उसकी माँ उसे खाना खिलाती थी तो यह कौर दादा का, यह दादी का, यह चाचा का कहकर एक एक का नाम लेकर पेट भर खिलाती थी। इससे सावित्री को बचपन से ही खाने-पीने की अच्छी ख़ासी आदत पड़ गयी।

शादी के पहले विठ्ठल खुद खाना पकाता था। सावित्री जब परिवार बसाने आयी तब विठ्ठल ने उसे रसोई-घर दिखाया और कहा "इस ताँबे के एक लोटे का चावल भर मेरे लिए काफ़ी पड़ता था। अब तो दुगुना चावल चाहिये।" कहते हुए उसने चावल और लोटा दिखाया। सावित्री ने 'हाँ' कह दिया। वह पति से क्या कह पायेगी? वह मन ही मन सोचने लगी कि इससे मेरा पेट कैसे भरेगा? उसे मालूम भी हो गया कि उसका पति बड़ा ही किफ़ायतमंद है। इधर-उधर कुछ हो गया तो डाँट भी पड़ सकती है। चुप्पी साधना ही उसने सही समझा।

सप्ताह बीत गया। भूख के मारे सावित्री को नींद नहीं आती थी। उससे रहा नहीं गया। आठवें दिन जब पति गाढ़ी नींद में था, तब उसने रसोई-घर में प्रवेश किया। उसने दो नारियल फोड़े और उनके पानी से चावल को मिलाकर उसने खीर बनायी और जी भरके खाया।

उस दिन से हर रात को सावित्री रसोई-घर में जाती और कुछ ना कुछ बनाकर खाती और अपना पेट भरती।

एक दिन रात को उसने चावल से खीर बनायी और उसे पत्ते में रखा। वह बहुत ही गरम था। उसने सोचा कि उसके ठंडा होते ही खाऊँगी। वह बरतन माँजने कुएँ के पास गयी। बरतन माँजकर वह रसोई-घर में आयी तो उसने देखा

तुम्हें चीर सकते हैं। ज़्यादा बनो मत। सीधे बैठ जाओ और खाओ।'' आँखें लाल करती हुई बोली।

चोर हक्का-बक्का रह गया और चुपचाप बैठ गया। इतने में विठ्ठल अंदर आ गया। सावित्री ने उससे कहा ''यह हमारे निकट रिस्तेदारों में से है। रिश्ते में भाई लगता है। किसी काम पर शहर जा रहा है''।

सावित्री की बातों से चोर संभल गया और बोला ''प्रणाम बहनोईजी। शादी के समय मैं बाहर गया हुआ था, इसलिए दीदी की शादी पर नहीं आ पाया। आपको और दीदी को देखने की बड़ी इच्छा थी। सोचा, शहर जाते-जाते आप दोनों को देख लूँ। आप सो रहे थे, इसलिए हमने आपको जगाया नहीं। काफ़ी रात हो गयी। मै ने बहुत मना किया, पर दीदी ने परोसा तो खाना पड़ रहा है''।

इतने में किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। विठ्ठल ने दरवाज़ा खोला। दो पुलिसवालों ने उससे कहा ''एक चोर का पीछा करते हुए हम यहाँ आये हैं। आपके घर में रोशनी देखी तो दरवाज़ा खटखटाया''।

विठ्ठल ने उनसे कहा ''यहाँ कोई चोर नहीं आया है। मेरा साला आया था और उसीसे मेरी पत्नी बातें कर रही है''।

पुलिसवाले चुपचाप वहाँ से लौट गये। लौटे अपने पति से सावित्री ने कहा ''मेरा भाई आपसे मिल चुका है। वह कहता है कि अभी निकल

कि एक आदमी वहाँ कुछ ढूँढ़ रहा है। उसे देखते ही वह चिल्ला पड़ी।

''मैं भयंकर चोर हूँ। फिर एक और बार चिल्लाया तो तुम्हारा गला घोंट दूँगा।'' चोर ने यों उसे चेतावनी दी।

उस शोरगुल की वजह से विठ्ठल का निद्रा-भंग हो गया। उसने चिल्लाया ''सावित्री, क्या बात है? यह कैसा शोरगुल हो रहा है? वहाँ कौन है? किसी की बातें सुनाई दे रही हैं।''

पति उठकर आ जाए तो उसकी चोरी खुल जायेगी, वह पकड़ी जायेगी, इसलिए उसने साहस बटोरते हुए धीरे-धीरे उस चोर से कहा ''देखो, मेरे पति आ रहे हैं। देखने में वे दुबले पतले हैं। नाराज़ हो जाएँ तो अपने नाखूनों से

पडूँगा तो सबेरा होते-होते शहर पहुँच जाऊँगा।''

विठ्ठल ने उसकी बात नहीं मानी। उसने कहा ''यह भी कोई आना-जाना हुआ? तुम्हारे कोई भी बंधु नहीं आते हमारे घर। जब आ ही गये हैं, तो मैं इस आधी रात को थोड़े ही जाने दूँगा। तुम्हारे भाई की पलंग दूसरे कमरे में डालो। जाने की बात कल देखी जायेगी।''

सावित्री ने लाचार होकर उसके सोने का इंतज़ाम दूसरे कमरे में किया। फिर सावित्री ने उससे कहा ''कर्ज़दारों और चोरों से मेरे पति बहुत चिढ़ते हैं। उनको देखते ही चाकू निकालते हैं। मैने तुम्हें अपने पति से बचाया है और मेरे पति ने तुम्हें पुलिसवालों से। आगे से इस घर में चोरी करने की कोशिश मत करो। हमारे सो जाते ही दरवाज़ा खोलकर चुपचाप चले जाओ। सबेरे आकर वे मुझ से तुम्हारे बारे में पूछेंगे तो किसी तरह उनसे निपट लूँगी।'' कहकर वह कमरे में चली गयी।

किन्तु वह सो नहीं पायी। सुबह तक वह जागी ही रही। सबेरे ही उसने जब बाहर आकर देखा कि पलंग खाली है तो उसने ठंडी साँस ली। फिर भी उसका मन नहीं मान रहा था तो वह कमरे के अंदर गयी। वहाँ का दृश्य देखकर ज़ोर से चिल्ला उठी।

कमरे में चीज़ें तितर-बितर पड़ी हैं। उसकी रेशमी साड़ियाँ तथा गहने ग़ायब हैं। उसकी चिल्लाहट ने विठ्ठल को जगा दिया। वह भी वहाँ

दौड़ा-दौड़ा आया।

''उस चोर ने हमारे घर को लूट लिया है'' सावित्री ने रोते हुए कहा।

''चोर? कहाँ?'' विठ्ठल ने बड़ी आतुरता से पूछा।

''रात को जो आया, वह मेरा रिश्तेदार नहीं था। वह चोर था'' आँसू बहाती हुई सावित्री ने कहा।

''तो तुमने मुझसे क्यों कहा कि वह तुम्हारा भाई है'' नाराज़ होते हुए विठ्ठल ने पूछा।

तब सावित्री ने उसका कारण बताया और कहा ''आपकी जानकारी के बिना मैने जो काम किये, उनकी मुझे सही सज़ा मिली है।

विठ्ठल हँस पड़ा ''पहले अपनी आँखें पोंछ

लो। तुम्हारी साड़ियाँ और गहने बिल्कुल सुरक्षित हैं। चोर का लिखा हुआ यह ख़त पढ़ो''।

उस ख़त में चोर ने लिखा ''मैं पढ़ा-लिखा हूँ। नौकरी कहीं नहीं मिली। छोटी-मोटी नौकरियाँ करना मैं अपना अपमान समझता था। पहली बार चोर बनकर आपही के घर आ रहा था। पुलिसवालों ने मेरा पीछा किया। अपराध की भावना मुझमें घर कर गयी। मैंने तब तक कोई अपराध तो नहीं क़िया था, लेकिन डर से मैं अपने आपको अपराधी महसूस करने लगा। जल्दी-जल्दी में आपके घर में घुस गया। दीदी, मुझे माफ़ करो। चोरी से खाने की आदत से अपने को बचाने के लिए तुमने मुझे अपना मेहमान बना लिया। पति से भी झूठ बोलकर पुलिसवालों से भी बचा लिया। तुमने अपने ही घर में एक छोटी-सी चोरी की, जिसके लिए तुम्हें अनेकों यातनाओं से गुज़रना पड़ा। असली चोर बन गया तो मालूम नहीं मुझे कितने खतरे मोल लेने पड़ेंगे, कितने कष्ट झेलने होंगे। क्या-क्या अपराध करने पड़ेंगे। सोचा तो मैं थर-थर काँप गया। अब जान गया हूँ कि तक़लीफ़ें उठाकर जो थोड़ा भी कमा पाऊँगा, उसी में तृप्ति है, शांति है। मेरी हृदयपूर्वक इच्छा है कि मुझ में जो परिवर्तन आया, वह मेरी दीदी में भी आये। इसीलिए यह ख़त लिख रहा हूँ।''

ख़त पढ़कर अपनी आँखें पोंछती हुई सावित्री ने कहा ''आपकी जानकारी के बिना इतने दिनों तक मूर्खता करती रही। भरपेट खाने की मेरी आदत ने मुझे ऐसा करने से विवश कर दिया। मुझे माफ़ करेंगे ना?''

''माफ़ी की क्या ज़रूरत है। अपने मायके की आदत यहाँ भी जारी रखो। तुम्हारे गहने और साड़ियाँ अलमारी में सुरक्षित रखी हैं मैंने। तुम जानती नहीं कि मैं तुमसे पहले ही जाग गया। उस चोर का ख़त मुझे मिल गया। जिस दिन तुम आयी थी, उसी दिन मैं समझ गया कि तुम्हें खाने से बड़ा लगाव है। अब राज़ तो खुल गया है। छिपाने का कोई मतलब नहीं। परंतु हाँ, आगे से अपने पकवानों का ज़ायका मुझे भी चखने का मौक़ा दो।''

सुखी परिवार

सोमनाथ विश्रांतिपुर का किसान था। उसकी पुरखों से चली आती हुई बहुत-सी ज़मीन थी। बेटा भूषण खेती के काम-काजों में उसकी मदद पहुँचाता था। वैसे तो गाँव में सोमनाथ से अधिक संपत्तिवान बहुत-से लोग थे, लेकिन लोग उसका आदर करते थे, क्योंकि वह अच्छा आदमी था, परोपकारी था, निस्वार्थी था। इसलिए लोग उसके पास सलाहें लेने भी आते रहते थे। गाँव के और धनी लोग उससे ईर्ष्या करते थे। उसकी निंदा करते थे। किन्तु वह मौन रहता और जो उचित समझता, वही करता था। किसी की निंदा तो वह कभी भी करता ही नहीं था।

एक बार सोमनाथ काम पर शहर गया। शहर और गाँव के बीच में एक नदी बहती है। शहर जाना हो तो नाव में नदी पार करनी पड़ती है। कभी नदी में बाढ़ आ जाए तो नाव को किसी एक किनारे पर रख दिया जाता था।

अपना काम पूरा करके सोमनाथ के लौटते-लौटते नदी में अकस्मात बाढ़ आ गयी। उसे मालूम हुआ कि बाढ़ के कम होने में दस दिन लगेंगे। इतने दिन वह रहे कहाँ? गाँव पहुँचने का एक दूसरा रास्ता भी था। लेकिन उस रास्ते से जाने से समय लगेगा। या तो पैदल जाना होगा, नहीं तो बैल गाड़ी से। उसने बैलगाड़ी में जाने का निश्चय किया और किराये पर बैलगाड़ी चलानेवाले गिरिनाथ के पास गया।

गिरिनाथ बैलों को तैयार कर ही रहा था, पचास साल का एक संपन्न व्यक्ति आकर उससे बोला "गिरिनाथ, तुम्हारे लिए तो मैंने अपने नौकर को भेजा। क्या तुमसे वह मिला नहीं? बिटिया की शादी के काम पर विश्रांतिपुर जाना है। पुरोहित का भी कहना है कि आज अच्छा मुहूर्त है। चलो, चलते हैं"।

ऐसे तो आजकल बैलगाड़ियों की माँग ही नहीं है तिसपर एकसाथ दो यात्री आये हुए हैं तो

गिरिनाथ बहुत ही खुश हुआ। उसने कहा "चलिये रामनाथ जी।" सोमनाथ को दिखाते हुए उसने कहा "ये भी विश्रांँतिपुर ही जा रहे हैं। आप उस गाँव के जिस व्यक्ति के घर जाना चाहते है, उनका पता ये आसानी से बता पायेंगे।"

बैलगाड़ी निकल पड़ी। बातों-बातों में सोमनाथ ने रामनाथ के बारे में सब कुछ जान लिया। रामनाथ शहर का एक बड़ा व्यापारी है। उसकी इकलौती बैटी है, जिसके रिश्ते के संबंध में ही वह विश्रांतिपुर निकला है। विश्रांतिपुर के अतिसंपन्न राजनाथ के बेटे से अपनी बेटी की शादी करने के सिलसिले में वह वहाँ आ रहा है।

राजनाथ के बारे में जब उसने विवरण पूछे तो सोमनाथ ने कहा "रामनाथजी, जब आप चखने ही जा रहे हैं तो उसकी रुचि पूछकर क्या कीजियेगा? शादी के मामलों में तो अच्छा यही है कि स्वयं जाकर पूछ-ताछ करें और प्रत्यक्ष सब जान जाएँ। मैं तो इस बारे में अपना मुँह बंद ही रखूँगा, क्योंकि शादी के लायक़ मेरा भी एक बेटा है। अगर किसी कारणवश यह शादी नहीं हो पायी तो राजनाथ यही समझेगा ना कि मैंने जानबूझकर यह रिश्ता होने नहीं दिया।"

सोमनाथ की सादगी, उसकी सच्चाई, ईमानदारी और स्पष्ट बोलने की उसकी पद्धतियों पर वह सोच ही रहा था कि गाड़ी गाँव के सरहदों पर पहुँची।

उस समय एक आदमी एक बूढ़े बैल को ज़बरदस्ती पहाडी प्रदेश की ओर हाँककर ले जा रहा था।
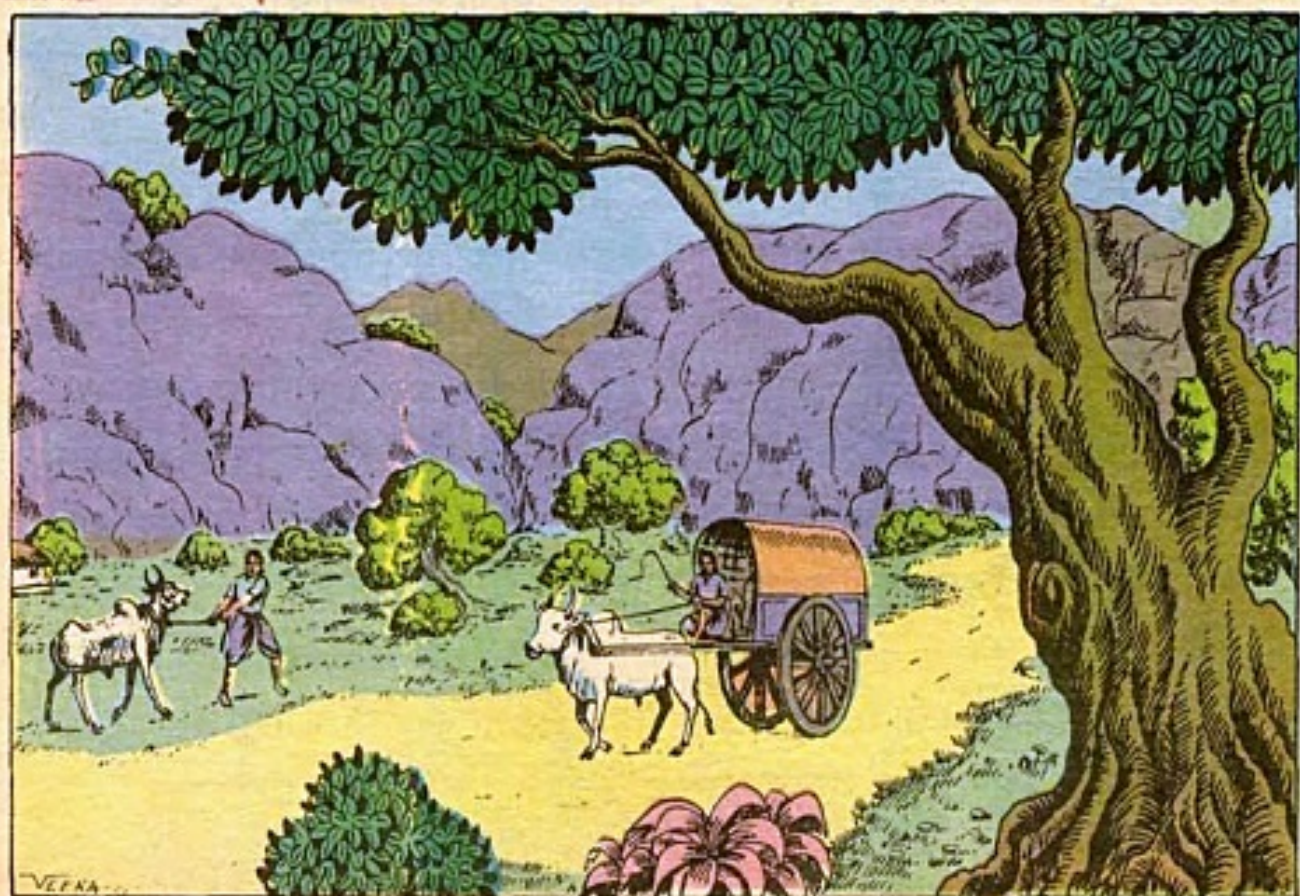
सोमनाथ ने गाड़ी रोकी। वह पहचान गया कि वह आदमी राजनाथ का नौकर है। उसने पूछा "यह तो राजनाथ का बैल है ना? उसे पहाड़ की तरफ़ क्यों ले जा रहे हो?"

नौकर ने कहा "बाबूजी, बैल बूढ़ा हो गया है। खेत के कामों में नहीं आता। बिल्कुल बेकार है। पहाड़ी प्रदेश में छोड़ दिया तो जितने दिन जी सकेगा, जियेगा। यहाँ रहे तो ज़्यादा दिन ज़िन्दा भी नहीं रहेगा। ऐसा मेरे मालिक का भी कहना है। उन्हीं के कहे अनुसार मैं इसे पहाड़ी प्रदेश में छोड़ने ले जा रहा हूँ।"

उसका जवाब सुनकर सोमनाथ दुखी होते हुए बोला "जब उम्र में था, तब इसने हमारी सेवा की, हमारे काम आया। भला, हम यह कैसे भुला दें? वहाँ छोडोगे तो सबेरे होते-होते कोई बाघ या चीता उसे खा डालेगा। सुनो, उसे गाँव वापस ले आओ। मैं अपने और पशुओं के साथ उसे भी चारा खिलाऊँगा। तुम्हें अपने मालिक का डर हो तो मैं उनसे भी बात करूँगा"। नौकर को अपने मालिक का डर तो था, लेकिन सोमनाथ की बात को वह टाल ना सका। वह बैल सहित गाँव लौटा। उसे सोमनाथ के और पशुओं के साथ बाँध दिया।

सोमनाथ गाड़ी से उतरने ही वाला था कि चबूतरे पर उसी के इंतज़ार में बैठा हुआ एक बूढ़ा आदमी पास आया और बोला "सोमनाथ, तुम तो जानते ही हो कि मेरे बेटे कितने अयोग्य हैं। वे दोनों कल एक हो गये और मुझे घर से निकाल दिया। मैं तुम्हारे घर आया हूँ। मुझे लौटाओ मत। मैं अच्छी तरह से जानता भी हूँ
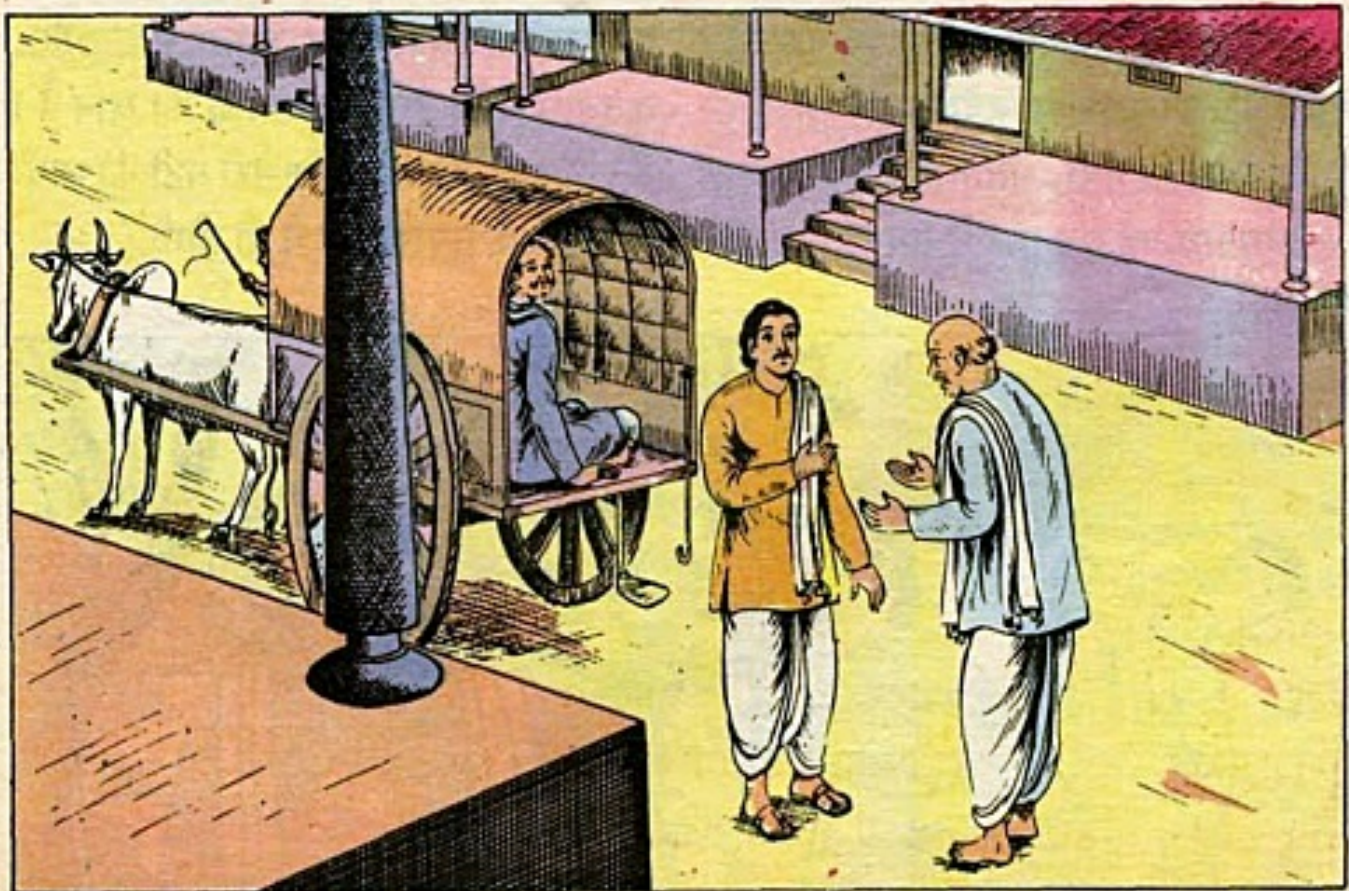
कि इतना साहस तुम कर भी नहीं सकते।"

सोमनाथ ने उस बूढ़े के हाथ पकड़ लिये और कहा "ऐसी बातें क्यों करते हैं आप। क्या आप मेरे पिता समान नहीं? मैं तो यही समझूँगा कि मेरे पिता ही ज़िन्दा होकर लौटे हैं"।

फिर बैलगाड़ी में बैठे हुए रामनाथ से उसने कहा "महाशय, हमारे यहाँ ठंडा पानी पीकर थोड़ा आराम कर लीजिये। फिर राजनाथ के घर जा सकते हैं।"

रामनाथ गाड़ी से उतरा। खेत से लौटा सोमनाथ का बेटा भूषण अपने पिता को देखकर बहुत ही खुश हुआ। उसने कहा "मालूम हुआ है कि बाढ़ की वजह से नावें नहीं चल रही हैं। मुझे ड़र लग रहा था कि आपको शहर में बड़ी असुविधा हुई होगी। ये हमारे दादा तो कह रहे थे कि जब तक आप नहीं आयेंगे, तब तक मैं घर में क़दम भी नहीं रखूँगा। बाहर ही बैठे रहे। इनके बेटों का बुरा बरताव देखते हुए मुझे लगता है कि वे मानव नहीं, शैतान हैं।

रामनाथ यह सब ग़ौर से सुन रहा था और देख भी रहा था। उसने ठंडा पानी पिया, चबूतरे पर बैठकर थकान दूर की और गाड़ीवाले से पूछा "गिरिनाथ, शहर में सुना था कि उस राजनाथ का घर बहुत बड़ा महल है। पर मै वहाँ जाना नहीं चाहता। मुझे तुरंत शहर वापस ले जाओ"। कहते हुए वह गली में चल पड़ा।

गिरिनाथ दौड़े-दौड़े उसके पास आया और पूछा "क्यों साहब, क्यों लौटना चाहते हैं, इतनी जल्दी? दुल्हे को देखेंगे नहीं?"

"मैने दुल्हे को देख लिया है।" कहते हुए गाड़ी में बैठ गया। रास्ते में कहा "मेरी बेटी वहाँ कैसे जियेगी, जहाँ दया, ममता आदि नाम मात्र के लिए भी नहीं हैं। बुढ़ापा आ जाए तो वह बैल हो या मनुष्य, दोनों कुछ लोगों की दृष्टि में तुच्छ हैं, शाप हैं, व्यर्थ हैं। संपत्ति में भले ही सोमनाथ मेरी बराबरी का ना हो, किन्तु उसके परिवार के सब सदस्य दया, ममता, सहानुभूति, कृतज्ञता आदि उत्तम भावनाओं की खान हैं। मैने निर्णय कर लिया है कि मेरी बेटी की शादी सोमनाथ के सुयोग्य पुत्र से ही होगी"।
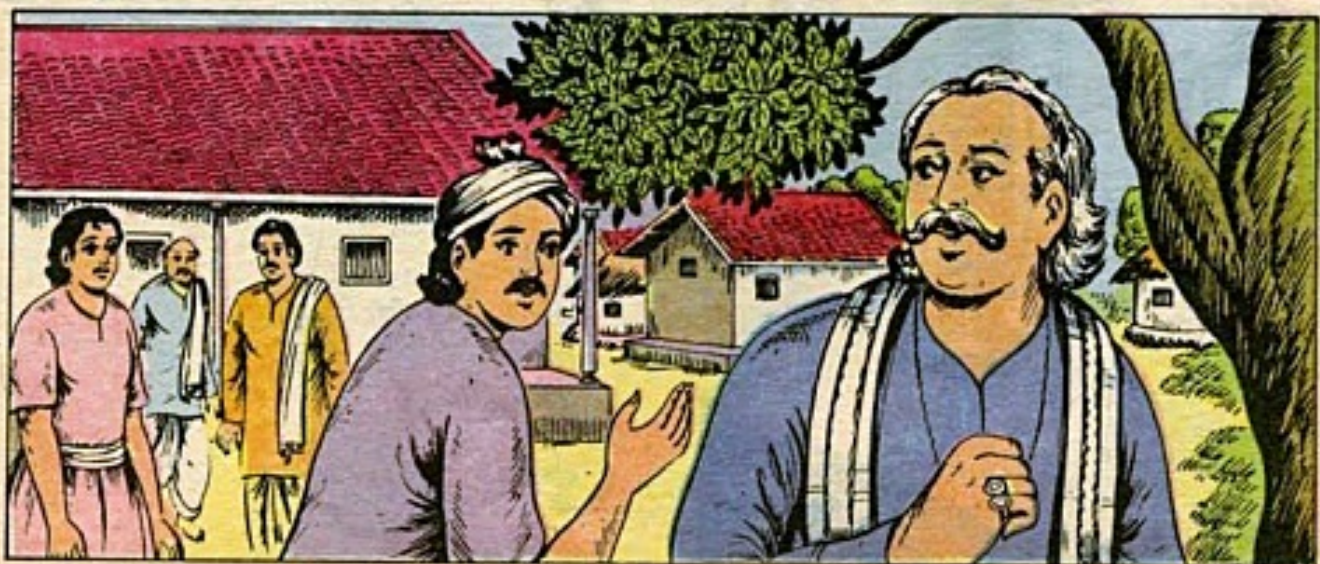
जनमेजय को अभी-अभी मालूम हुआ कि उसके पिता परीक्षित की मृत्यु कैसे हुई? बचपन में ही मंत्रियों ने उसका राज्याभिषेक किया और यौवन में प्रवेश करने के बाद उसने काशीराजा की पुत्री वपुष्टा से विवाह किया।

"आपके पिता की मृत्यु सर्प के डसने से हुई है। अतः उदंक महामुनि के कहे अनुसार अच्छा यही होगा कि आप सर्पयाग करें। ऐसा करना उचित भी है"। जनमेजय को मंत्रियों ने अपनी मंत्रणा दी।

जनमेजय ने सर्पयाग करने का निश्चय किया। तक्षक आदि सर्पों को याग की अग्नि में आहुति देने का भी निर्णय लिया। उसने पंडितों, राजपुरोहितों, ऋत्विकों को बुलाया और उनसे पूछा कि सर्पयाग की क्या-क्या पद्धतियाँ हैं? ऋत्विकों ने कहा कि सर्पयाग का प्रबंध केवल जनमेजय के लिए किया जायेगा, क्योंकि ऐसा याग अन्य कोई नहीं करता।

याग की सामग्री जुटायी गयी। यज्ञशालाओं का निर्माण हुआ। आवश्यक प्रबंध बड़ी तेज़ी से होने लगे। उस समय लोहिलाक्ष नामक एक सूत ने, जो भविष्य का ज्ञाता है, कहा कि इस याग की पूर्ति में एक ब्राह्मण बाधक बननेवाला है।

जनमेजय ने उसकी चेतावनी की परवाह नहीं की। उल्टे उसने आदेश भी दिया कि जब तक याग पूरा नहीं होता, तब तक लोहिलाक्ष को यागशाला में प्रवेश करने ना दिया जाए। वह पत्नी वपुष्टा के साथ यज्ञ करने यज्ञशाला पहुँचा। चंद्रभार्गव होता, पिंगल अध्वर्य तथा कोत्सु उद्गाता बनकर यज्ञ चलाने लगे। लाखों की

२. ययाति कथा

संख्या में सर्प अग्निकुँड में गिरने लगे और भस्म होने लगे।

तक्षक भयभीत हो गया और इंद्र की शरण में गया। "ब्रह्मा पहले ही बता चुके हैं कि उच्च कोटि के कुछ सर्पों को इस याग से डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। भयभीत मत होना। मेरे ही पास रहना" आश्वासन देते हुए इंद्र ने तक्षक से कहा।

सर्पों के विनाश को देखते हुए वासुकि बहुत ही दुखी हुआ। वह अपनी छोटी बहन जरत्कार के पास गया और बोला "हमने तुम्हारा विवाह जरत्कार से इसलिए किया कि ऐसी कोई दुर्घटना ना घटे। अपने पुत्र अस्तीक को तक्षण भेजो और इस सर्पयाग को बंद कराओ"।

माता के कहने पर अस्तीक सर्पयाग के स्थल पर पहुँचा। आदि वचन कहने के बाद उसने राजा, ऋत्विकों तथा अग्नि की पूजा की। उनकी प्रशंसा में श्लोक-गान किया। अस्तीक को देखकर जनमेजय बहुत ही प्रसन्न हुआ और कहा "देखने में किशोर हो, परंतु ज्ञानी हो। जो वर चाहोगे, देने का मैने निर्णय किया है।"

अस्तीक ने तक्षण ही यज्ञ रोकने का वर माँगा। जनमेजय ने उससे कहा कि सर्पयाग को रोकने के वर के अलावा दूसरा उसका कोई भी वर वह पूरा करने को सन्नद्ध है। पर अस्तीक टस से मस ना हुआ। शेष सदस्यों ने भी राजा को परामर्श दिया कि वे अपना वचन निभायें। उन्होनेराजा से बताया कि एक राजा को अपने वचन से मुकर नहीं जाना चाहिये। उन्होने यह भी कहा कि ऐसा करने से उनके यज्ञ का लक्ष्य भी पूरा नहीं हो पायेगा। यों सर्पयाग रुक गया।

जनमेजय ने सबको दक्षिणाएँ दीं, उनका सत्कार किया। वेदव्यास अपने शिष्य समेत वहाँ पधारे। वहाँ पधारे हुए वैशंपायन ने जनमेजय के पूर्वज पाँडवों की कहानी उसे सविस्तार यों बतायी।

भारत वंश के मूल पुरुष हैं वैवस्वत। वे अदिति के पोते हैं। वैवस्वत की पुत्री इला का पुत्र है पुरुरव। पुरुरव और ऊर्वशी के छे पुत्र हुए। आयु उनमें से एक है। उसका पुत्र है नहुष। नहुष ने छे पुत्रों को जन्म दिया। उनमें से ययाति दूसरा है। अग्रज यति तपस्या करने चले गये तो ययाति

ने राज्य-भार संभाला। ययाति के शासन-काल में शुक्र दानवों के पुरोहित रहे। देव और दानवों के बीच जो युद्ध होते थे और जो दानव उन युद्धों में मर जाते थे, उनको मृतसंजीवनी नामक मंत्र से वे जिलाते थे। देवताओं के गुरु बृहस्पति इस विद्या से अपरिचित थे। अत: देवताओं ने बृहस्पति के पुत्र कच को मृतसंजीवनी मंत्र सीखने के लिए शुक्र के पास भेजा।

कच शुक्र के पास आया और उनकी पर्याप्त सेवा-शुश्रूषा की। शुक्र की पुत्री देवयानी को अपनी बातों से आनंदित करते हुए दिन बिताने लगा। उसका एक मात्र लक्ष्य मंत्र सीखना था। उसे क्या मालूम था कि गुरु की पुत्री उसे मन ही मन चाहने लगी है, उससे प्रेम करने लगी है। दानवों को यह मालूम हो गया कि कच बृहस्पति का पुत्र है। वह जब जंगल में गुरु की गायें चरा रहा था, तब उन्होने उसको मार डाला और उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। यह समाचार पाते ही शुक्र ने अपने मृतसंजीवनी मंत्र से उसमें प्राण फूँके। कच अब जीवित हो गया। एक बार जब वह देवयानी के लिए फूल लाने गया तो दानवों ने फिर से उसे मार डाला। उसे समुद्र में फेंक दिया। देवयानी कच के लिए विलाप करने लगी। शुक्र ने उसे फिर से जीवन प्रदान किया।

दानवों ने तीसरी बार उसे मार डाला और उसका भस्म कर दिया। उस भस्म को उन्होंने सुरा में मिला दिया और शुक्र को पीने के लिए दिया। इस बार जब शुक्र ने उसकी रक्षा की, तब कच शुक्र की पेट में था।

विवश होकर शुक्र ने उसे मृतसंजीवनी का मंत्र सिखाया। उससे कहा कि मेरा पेट चीरकर बाहर आओ औरर यह भी कहा कि उस मंत्र से मुझे जिलाओ। कच बाहर आया और उसने ऐसा ही किया।

कच का लक्ष्य पूरा हो गया। समय पाकर उसने गुरु से जाने की अनुमति माँगी।

तब देवयानी ने कहा ''तुमसे मैं प्रेम करती हूँ, इसीलिए मैने तुम्हें अनेकों बार जीवन प्रदान किया है। मुझसे विवाह करो''।

कच ने कहा ''तुम मेरे गुरु की पुत्री हो, मेरी बहन के समान हो। गुरु की पुत्री से विवाह करना पाप है और मैं यह पाप कदापि नहीं करूँगा।''

देवयानी से यह अपमान सहा नहीं गया। स्त्री सब कुछ सह सकती है, किन्तु अपने प्रेम का तिरस्कार और अपमान सह नहीं सकती। उसने कहा "अच्छा, ऐसी बात है। तो तुम्हारा मृत संजीवनी मंत्र निष्फल होगा" देवयानी ने कच को शाप दिया।

कच क्रोधित हुआ और उसे शाप दिया कि तुमसे कोई भी ब्राह्मण विवाह नहीं करेगा।

वृषपर्व दानवों का राजा था। शर्मिष्ठा नामक उसकी एक पुत्री थी। एक दिन देवयानी अनेकों सहेलियों को लेकर वनविहार करने गयी। एक जगह पर उन्हें एक सरोवर दिखायी पड़ा। सब युवतियों ने अपने-अपने वस्त्र उतार दिये। उन्हें किनारे पर रख दिया और सरोवर में जलक्रीडाएँ करने लगीं। उस समय ज़ोर की हवा चली और उनके सारे कपड़े उड़ गये। बाहर आयीं और तितर-बितर साड़ियाँ इकठ्ठी करके जल्दी-जल्दी पहनने लगीं।

उस जल्दबाज़ी में शर्मिष्ठा ने देवयानी की साड़ी पहन ली। देवयानी आग-बबूला हो गयी। देवयानी ने क्रोधित होकर कहा "अरी राक्षसी, मैं ब्राह्मण स्त्री हूँ। ब्राह्मण जाति सब जातियों से श्रेष्ठ है। तू तो दानव हैं, नित्कृष्ट जाति की हो। तुम्हारी साड़ी मैं नहीं पहनूँगी। मेरी साड़ी तुमने क्यों पहन ली?"

"भिखमंगी कहीं की? तू मुझे डाँटती है? तेरे पिता मेरे पिता की दी हुई भीख स्वीकार करते हैं। हमारा आश्रय लेकर तू जीवन बिता

रही है। तेरी साड़ी पहनने से तेरा अपमान हो गया?" शार्मिष्ठा ने कडुवे स्वर में कहा। उस उबलते हुए क्रोध में उसने देवयानी को एक कुएँ में फेंक दिया और अपनी सहेलियों को लेकर चल पड़ी।

थोड़ी देर के बाद ययाति वहाँ से गुज़रने लगा। वह आखेट करते-करते थक गया था। अपनी प्यास बुझाने के लिए कुएँ में झाँककर देखा। उसे वहाँ देवयानी दिखायी पड़ी। ययाति ने उससे पूछा कि तुम कौन हो और कुएँ में कैसे आयी हो?

"मैं दानवों के गुरु शुक्राचार्य की पुत्री हूँ। मेरा नाम देवयानी है। कुछ कारणों से मैं कुएँ में गिर गयी हूँ। मुझे बाहर निकालो" कहती हुई

देवयानी ने पूरा विवरण अपने पिता को बताया और साथ-साथ शर्मिष्ठा की कही बातें भी सुनायीं। शुक्र ने पूरा सुनने के बाद कहा "तुम्हारे सिवा इस संसार में मेरा और कौन है? तुम नहीं आओगी तो मैं भी वृषपर्व के नगर में पैर नहीं रखूँगा"।

वृषपर्व को इन सारी बातों का पता लग गया। वह जानता था कि गुरु शुक्र की अनुपस्थिति में देवता उसका सर्वनाश करेंगे; दानवों का नाश कर देंगे, इसलिए वह स्वयं शुक्र के पास आया और कहा "आप दोनों इस वन में क्यों हैं? नगर चलिये"।

"आप लोगों का व्यवहार मुझे ठीक नहीं लग रहा है। आपके आदमियों ने मेरे शिष्य कच को अनेकों बार मार डाला है। अब आपकी बेटी ने मेरी बेटी को कुएँ में ढ़केल दिया और मार डालना चाहा। मुझे आपके यहाँ नहीं रहना है" शुक्र ने क्रोध से कहा।

वृषपर्व ने बहुत गिड़गिड़ाया, गुरु के पैरों गिरा। शुक्राचार्य अपनी पुत्री को बहुत चाहता था। उसके लिए वह कुछ भी करने को तैयार था। उसका सुख ही उसका एक मात्र लक्ष्य था। इसलिए शुक्र ने कहा कि मेरी पुत्री मान जाए तो मैं आने के लिए सन्नद्ध हूँ। देवयानी ने एक शर्त रखी। उस शर्त के अनुसार शर्मिष्ठा और उसकी सहेलियों को उसकी दासियाँ बननी होंगीं। वृषपर्व ने शर्त मान ली। शर्मिष्ठा देवयानी की दासी बनी। देवयानी की कड़वी बातें चुपचाप

देवयानी ने अपना हाथ बढ़ाया।

ययाति ने अपने दायें हाथ से उसका दायाँ हाथ पकड़ा और उसे ऊपर खींचा। फिर वह वहाँ से चला गया।

इस बीच घूर्णिका नामक एक दासी उसे ढूँढ़ती हुई वहाँ आयी। देवयानी ने उससे कहा "अरी, मैं अब वृषपर्व के राज्य में पैर नहीं रखूँगी। शर्मिष्ठा ने मेरा घोर अपमान किया है। तुम जाकर यह समाचार मेरे पिताश्री को देना"।

समाचार पाते ही शुक्र दौड़ा-दौड़ा देवयानी के पास आया और बोला "शर्मिष्ठा का तुमने क्या बिगाड़ा है, जिसके लिए उसने तुम्हें कुएँ में गिरा दिया?"

सहती रही। क्योंकि शुक्राचार्य की कृपा से दानवलोक को अनगिनत लाभ पहुँचे।

एक बार देवयानी, शर्मिष्ठा तथा अन्य सहेलियों को लेकर उसी स्थल पर गयी, जहाँ पूर्व घटना घटी। ययाति पुनः शिकार करते-करते वहीं पहुँचा।

देवयानी ने उससे उसकी जाति तथा नाम जाना। फिर कहा "तुम वही मानव हो ना, जिसने अपने हाथ का सहारा देकर मुझे कुएँ से उबारा? उसी दिन हमारा पाणिग्रहण हो गया। उस क्षण से तुमको मैं अपना पतिदेव मान रही हूँ।" शर्मिष्ठा ने शाप भी दिया था कि तुम्हारा विवाह किसी ब्राह्मण से नहीं होगा। भला वह इस शाप से मुक्त होगी भी कैसे?

ययाति झिझकता रहा कि एक ब्राह्मण-कन्या से कैसे विवाह करूँ? परंतु शुक्र ने उनके विवाह की सम्मति दी। दोनों का विवाह बड़े वैभव से हुआ। शुक्र और दानवों ने दोनों को बहुमूल्य पुरस्कार दिये। देवयानी शर्मिष्ठा और दो हज़ार दासियों को लेकर परिवार बसाने ययाति के यहाँ आयी। शर्मिष्ठा तथा अन्य दासियों के रहने के लिए अशोकवन के पास ही ययातिने एक बड़े भवन का प्रबंध किया।

देवयानी और ययाति के यद और तुर्वस नामक दो पुत्र हुए।

कुछ समय के बाद शर्मिष्ठा को अपनी दीन स्थिति पर बहुत ही दुख हुआ। काफ़ी उम्र हो गयी, परंतु अब तक उसका विवाह हो नहीं पाया।

देवयानी तो बच्चों की माँ भी हो गयी। उसमें प्रतिस्पर्धा की भावना जाग उठी। उसने सोचा "देवयानी जब ययाति से विवाह रचा सकती है, तो मैं क्यों ययाति से विवाह नहीं कर सकती?"

एक दिन ययाति जब अशोकवन आया तो शर्मिष्ठा ने उससे कहा "राजन्, आप मेरी मालकिन के पति हैं तो आप मेरे भी पति हैं। मुझे पत्नी के रूप में स्वीकार कीजिये।

ययाति को भय था कि शुक्र क्रोधित हो जायेगा। वह उसकी इच्छा को अस्वीकार कर ना सका। छिपे-छिपे वह उससे मिलता रहा। उनके द्रुह्यु, अनु, पुरु, नामक तीन पुत्र हुए।

देवयानी को मालूम हुआ कि शर्मिष्ठा माँ बनी है। वह शर्मिष्ठा से मिली और पूछा "सबका कहना है कि तुम उत्तम शीलवती हो, पतिव्रता हो, बड़े वंश में तुम्हारा जन्म हुआ है, पर यह तो बताओ कि बिना विवाह किये तुम माँ कैसी बनी हो? बच्चे कैसे पैदा हो गये?" उसका उद्देश्य शार्मिष्ठा को नीचा दिखाना था, उसका अपमान करना था।

शर्मिष्ठा ने लज्जा से अपना सिर झुकाकर कहा "मैं जब ऋतुस्नान कर रही थी, तब एक महामुनि ने मुझे पुत्रदान दिया"।

"वह मुनि कौन है? क्या नाम है? किस जाति का है?" देवयानी ने प्रश्न किया।

"उस महानुभाव की तेजस्विता देखते हुए उनसे पूछने की मेरी इच्छा नहीं हुई, मैं साहस नहीं कर सकी।" शर्मिष्ठा ने कहा।

देवयानी उसके उत्तर से तृप्त हुई।

एक बार ययाति और देवयानी घूमते-घूमते शर्मिष्ठा के निवास-स्थल के पास आये। तब देवयानी को सच मालूम हो गया। उसे शर्मिष्ठा के बच्चे दिखायी पड़े। उनका रूप-रंग ययाति से मिलता-जुलता था। अपना संदेह दूर करने के लिए उसने शर्मिष्ठा के बच्चों से पूछा कि सच बताओ, तुम्हारा पिता कौन है? तो उन्होने ययाति को दिखाया।

तक्षण देवयानी शर्मिष्ठा को कोसती हुई बोली "डायन, मेरा ही नाश करने पर तुल गयी?"

शर्मिष्ठा बिना झिझके बोली "मैने कोई अधर्म नहीं किया। तुमने इस राजा को जैसा चाहा, वैसा ही मैने भी चाहा है। तुम मुझसे बड़ी हो, ब्राह्मण स्त्री हो, इसीलिए मैं तुम्हारा आदर कर रही हूँ। पर ये तो राजर्षि हैं। इसीलिए मैने तुमसे कहा कि ये एक ऋषि की संतान हैं।

देयवानी ने ययाति से कहा "तुमने मेरे साथ छल किया। मैं तुम्हारे पास नहीं रहूँगी"। वह सीधे अपने पिता के पास गयी और सब कुछ बताया, जो हुआ।

शुक्र क्रोधित हुआ और उसने शाप दिया कि ययाति वृद्ध बन जायेगा।

(सशेष)

चन्दामामा की ख़बरें

भाग्यदेवी

ग़रीब अरब के दंपतियों को जन्मी बच्ची एक ही दिन में करोड़ों की मालकिन हो गयी। यह कैसे संभव हो पाया? इज़राइल के टेलअविन नगर के एक अस्पताल में बलील नामक एक बच्ची को जन्म दिया मरियम अलामोर ने। उसी समय इज़राइल में एक नयी लाटरी का आरंभ हुआ, जिसका नाम था 'भाग्य नक्षत्र'। अलामोर ने अपनी बच्ची के नाम एक टिकट ख़रीदा। वह १,०००,००० षेकेल है, जो क़रीबन ३,३०,००० अमेरिकन डालरों के समान है। बेरोज़गारी की वजह से उसके माता-पिता को सरकार से अब तक भत्ता मिलता रहता था, लेकिन इस 'भाग्यदेवी' ने एक ही दिन में इतनी बड़ी रक़म अपने माँ-बाप को बख़्शी। उसके माँ-बाप ने निश्चय किया कि पहले वे इस 'भाग्यदेवी' को मक्का ले जाएँगे और उसके बाद बच्ची के लिए एख सुँदर घर ख़रीदेंगे।

सर्वप्रथम

हम पढ़ चुके हैं कि ऐतिहासिक पूर्व युग के डिनोज़ार्स नामक राक्षस चिपकलियों के अंडे शिलाजों में परिवर्तित होकर जहाँ-कहीं दिखाई दे रहे हैं। पिछले अप्रैल में दक्षिण अमेरीका के पेरु में ३,००,००० वर्षों के पूर्व के घोड़े का अस्थिपंजर पाया गया। विज्ञानवेत्ताओं का दावा अगर सच निकला तो घोड़े का यह अस्थिपंजर सब से प्राचीन घोड़े का अस्थिपंजर होगा।
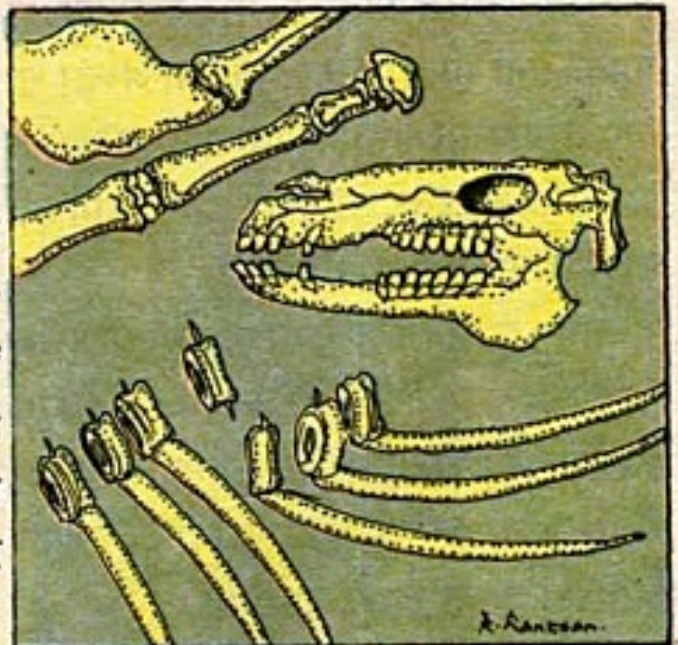
दस लाख चित्र

चिन्मय भारतीय आध्यात्मिक गुरु हैं। वे न्यूयार्क में बस गये। उन्होंने दस लाख कबूतरों का चित्रण किया, जो शांति के प्रतीक हैं। जब वे फिजी द्वीप में थे, तब उन्होंने कबूतर का जो रम्य चित्र खींचा, उसे रूस के पूर्व अध्यक्ष गोर्बचेव की पत्नी रैजा गोर्बचेव को समर्पित किया। चिन्मय कहते हैं कि हर चित्र मेरे हृदय की प्रार्थना है।
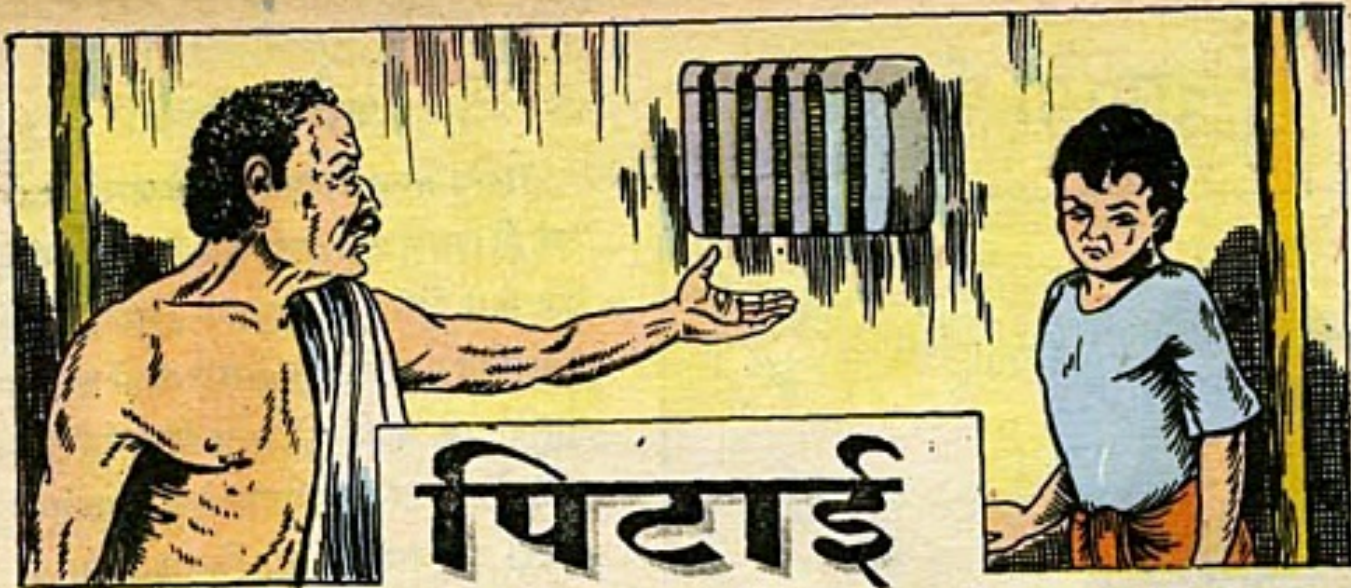
राघव किसान का बेटा था। किसान को अपने बेटे से रत्ती भर भी प्रेम नहीं था। उससे बहुत ही बुरी तरह से पेश आता था। वह उससे खेती का काम बड़ी सख़्ती से लेता था। घर का भी अधिकाधिक काम उसे ही सौंपता था। राघव काम बड़ी ख़ूबी से करता था, परंतु क्या फ़ायदा? वह कितना भी काम करे, कितना अच्छा भी करे, उसकी तारीफ़ नहीं होती थी। वह जितना ज़्यादा काम करता, उतना ही ज़्यादा काम उसे सौपा जाता था।

राघव के गाँव में ही रामी नामक एक ग़रीब लड़की रहती थी। रामी भी अक़्लमंद और काम करने में चुस्त थी। दोनों ने एक दूसरे को चाहा। दोनों ने शादी करने की भी ठानी। राघव ने अपने पिता को अपना उद्देश्य बताया।

"तुम्हारा पालन-पोषण ही मेरे लिए एक समस्या बन गयी हैं तिसपर तुम शादी करके मेरा बोझ और बढ़ाना चाहते हो? तुम्हारी पत्नी घर आयेगी, तुम्हारे बाल-बच्चे होंगे, इन सबकी देखभाल मैं क्यों करूँ? यह तो हो ही नहीं सकता। जब तुम आत्म-निर्भर बनोगे, तब शादी की बात करना। तब तक चुपचाप काम पर लगे रहना।" उसके पिता ने स्पष्ट कह दिया।

राघव को लगा कि पिता के साथ रहकर जो बेग़ारी वह कर रहा है, उससे तो अच्छा यही है कि किसी और दूसरी जगह पर काम कर लूँ। इससे शादी करके पत्नी की भी देख-भाल ठीक-ठाक कर पाऊँगा। यहाँ रहने से हालत सुधरेगी भी नहीं। अच्छा यो यहीं होगा कि यहाँ से चला जाऊँ और काम करके कमाऊँ। जो पिता मुझे नालायक समझ रहे हैं, उन्हें किसी दिन बताऊँगा कि मैं कितना लायक़ हूँ। यों सोचकर पिता से कहे बिना वह घर छोड़कर दूसरे प्रांत में चला गया। सिर्फ रामी ही जानती थी कि वह घर छोड़कर काम की

(पचीस साल पहले 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी)

खोज में जा रहा है।

राघव जंगल से गुज़र रहा था। उसने वहाँ एक बूढ़ी को देखा। उस बूढ़ी के सिर पर लकड़ियों का बोझ था।

"दादी, तुम बूढ़ी हो, तुम ढो नहीं सकती। मुझे देना। मैं तुम्हारी मदद करूँगा।" राघव ने कहा।

"बेटे, तुम कहाँ के हो? तुम्हारा नाम क्या है? कहाँ जा रहे हो?" अपना बोझ उसे देती हुई उस बूढ़ी ने पूछा।

राघव ने अपनी पूरी कहानी सुनायी और कहा "कहीं काम ढूँढ़ते हुए निकला हूँ। थोड़े-बहुत पैसे जुट जाएँगे तो गाँव जाकर रामी से शादी करूँगा"।

"तो कहीं और जाने की क्या ज़रूरत है? मेरे ही घर में काम करो। जब तक रहोगे, वहीं खाना-पीना। जब अपना गाँव जाना चाहोगे तो मुझसे जो हो सका, मैं दूँगी" बूढ़ी ने कहा।

"यही ठीक है दादी। तुम जैसी बूढ़ी की सेवा करने से थोडा-बहुत पुण्य भी मिलेगा"। राघव ने कहा।

राघव ने एक साल बूढ़ी के पास काम किया। पशुओं को चारा खिलाता, उन्हें पानी पिलाता, दूध दुहता, जंगल जाकर लकड़ियाँ काट लाता। इन कामों को करते हुए कभी भी उसने सुस्ती नहीं दिखायी। और ये काम करता भी बड़ी श्रद्धा से। बूढ़ी भी उसे दिन में तीन बार खूब खिलाती थी। साल पूरा होते ही उसने राघव से कहा "राघव, तुमने अपना वचन निभाया। साल-भर रहे और अच्छी तरह से काम किया। मैंने भी तो कहा था कि जब तुम लौटोगे, तब अवश्य ही थोड़ा-बहुत अवश्य दूँगी। मेरे पास जो गधा है, उसे ले जाओ और आराम से अपनी ज़िन्दगी गुज़ारो।" बूढ़ी ने कहा।

यह सुनकर राघव का चेहरा फीका पड़ गया। गधे से उसका क्या काम? वह उसे क्या खिलायेगा? किसी धोबी को बेचा जाए तो दो तीन रुपये मिलेंगे। पर उसे ले जाकर अपनी पत्नी को कैसे सुखी रख पायेगा। उसे लगा कि बूढ़ी उसे धोखा दे रही है। निराशा से भरे उसके चेहरे को देखकर बूढ़ी हँस पड़ी और

बोली "पगले कहीं के, इतने दिन मैने तुमसे काम करवाया। क्या एक मामूली गधा तुम्हें देकर भेजूँगी? उसके दोनों कान कसकर खींचो, फिर तुम्हीं देखना कि उसका नतीजा क्या निकलता है?"

कान खींचते ही गधा ही ही करने लगा। जब तक वह ही ही करता रहा, तब तक उससे हीरे और मोती बरसने लगे। राघव बहुत ही संतृप्त हुआ और बूढ़ी को प्रणाम किया। फिर गधे को लेकर अपने गाँव चला।

जाते-जाते शाम हो गयी। वह एक गाँव में पहुँचा और वहीं रुक गया। उसने सोचा कि रात यहीं गुज़ारकर सुबह निकल पड़ूँगा। एक बूढ़ी के पास गया और बोला "दादी, दादी, आज रात को तुम्हारे यहाँ खाना खाऊँगा। यहीं सोकर कल चला जाऊँगा"।

उस बूढ़ी के बेटे ने गधे को एक पेड़ से बाँध दिया। भोजन समाप्त करके राघव सोने ही वाला था कि बूढ़ी ने कहा "बेटे, शायद तुम तड़के ही निकल पड़ोगे, इसलिए अच्छा यही होगा कि भोजन का मूल्य एक अशर्फी अभी दे देना।"

"ठहरो दादी, अभी ले आया" कहकर वह गया और गधे के कान कसकर खींचे। गधे ने ही, ही करता हुआ, हीरे, मोतियों और अशर्फ़ियों को बरसाया।

राघव घर के अंदर आया और उसे दो अशर्फ़ियाँ देते हुए बोला "ग़रीब हो, रख लो। काम आयेंगे"।

बूढ़ी के बेटे ने जो हुआ, सब देख लिया। राघव जैसे ही सो गया, पेड़ से बंधे गधे को छुड़ाकर वह दूर ले गया और उसकी जगह पर एक दूसरे गधे को लाकर पेड़ से बाँध दिया। उसके बाद राघव के पास जो मोती, हीरे थे, चुरा लिये।

सबेरे - सबेरे राघव गधे पर चढ़ा और अपने गाँव की ओर चल पड़ा। उसने अपने पिता से पूरा वृत्तांत सुनाया और कहा "आप भी उसके कान खींचें तो स्वयं सब कुछ जान जायेंगे"।

किसान ने वैसे ही किया, जैसे बेटे ने बताया। गधे ने ही ही किया, लेकिन वह मोती, हीरे

बरसाने के बदले किसान को अपने पिछले पैरों से लात मारता रहा।

"छी, गधे कहीं के। तुम्हें किसी ने बेवकूफ बनाया है। मेरे सामने से निकल जाओ" राघव के पिता ने उसे आज्ञा दी और उसे खूब गालियाँ दीं।

राघव समझ नहीं पाया कि यह कैसे हुआ? इससे वह निराश नहीं हुआ। पिता की गालियों ने उसे और भड़का दिया। उसने निर्णय कर लिया कि कहीं जाकर मैं फिर से नौकरी करूँगा और धन कमाऊँगा। इस दृढ़ निश्चय के साथ वह वहाँ से निकल पड़ा।

रास्ते में एक जंगल आया। उसने देखा कि एक बढ़ई लकड़ियों को काटकर बाँधे ले जा रहा है।

"दादाजी, दादाजी, आप उम्र में बड़े हैं। इन्हें आप कहाँ ढो पायेंगे? मुझे दीजिये। आपके घर पहुँचा दूँगा" राघव ने कहा। बढ़ई ने राघव की पूरी कहानी सुनी और उसे आश्वासन दिया कि साल भर उसके पास काम करने पर उसे जो उचित लगेगा, देगा। राघव साल भर उस बढ़ई की मदद करता रहा। पहले की ही तरह उसने काम में किसी प्रकार की ढिलाई नहीं दिखायी। जितना हो सके, खूब मेहनत करता था। बढ़ई भी उससे बहुत खुश हुआ। जब वह उसे छोड़कर जानेवाला था, तो उसे ताँबे की एक थाली बढ़ई ने देते हुए कहा "यह मामूली थाली नहीं है। इससे पूछो "थाली, मुझे खाना खिलाओ" तो यह सब प्रकार के पकवानों सहित स्वदिष्ट खाना खिलायेगी"।

इतना भोजन भरा हुआ था कि उसके, बूढ़ी के और उसके बेटे के खाने के बाद भी बहुत बच गया था।

राघव जब बेसुध सो रहा था, तो बूढ़ी के बेटे ने उस थाली को चुराया और उसकी जगह पर ऐसी ही थाली रख दी। राघव फिर से पिता के पास गया और बोला "अब देखिये, मैं क्या लाया हूँ।" उसने थाली बाहर निकाली और कहा "खाना खिलाओ थाली", पर थाली तो ख़ाली ही रही। उसने ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाया 'खाना खिलाओ थाली', पर वह थाली ख़ाली ही रही। पिता ने फिर से उसे ख़ूब गालियाँ दीं। उसे निकम्मा, सुस्त व बेकार कहते हुए घर से निकाल दिया।

थाली के सामने राघव बैठ गया और बोला "थाली, मुझे खाना खिलाओ"। देखते-देखते थाली पकवानों से भर गयी। उसने पेट भर खाया और बढ़ई को प्रणाम करके वहाँ से चल पड़ा।

पहले की ही तरह वह उसी बूढ़ी के घर गया और उससे कहा "रात हो गयी है। आज यहीं सोऊँगा और कल चला जाऊँगा"।

"खाना? नहीं, नहीं, ख़तम हो गया।" बूढ़ी ने कहा।

"मैं खाने की बात नहीं कर रहा हूँ दादी माँ। खाना खिलाने वाली थाली तो मेरे पास है।" कहते हुए उसने थाली निकाली और कहा "खाना खिलाओ थाली"। उसमें

राघव फिर काम ढूँढ़ने निकल पड़ा। रास्ते में उसे एख बड़ा नाला दिखायी पड़ा। नाले के किनारे एक बड़ा पेड़ था। एक बूढ़ा आदमी उसे कुल्हाड़ी से मार रहा था।

"क्यों उस पेड़ को गिरा रहे हो?" राघव ने पूछा।

"नाले को पार करने के लिए एक पुल बाँधना है। इसीलिए पेड़ काट रहा हूँ"। बूढ़े ने कहा।

"वह कुल्हाड़ी मुझे दो" कहते हुए उसने कुल्हाड़ी ली और पेड़ को काटा। काटे हुए पेड़ को नाले पर पुल की तरह ड़ाल दिया।

बूढ़े ने राघव से कहा "तुमने मेरी बहुत मदद पहुँचायी। इसका प्रतिफल लो" कहकर

उसने एक लकड़ी काटी और उससे बेंत बनाकर उसे दिया।

राघव तिरस्कार ना कर सका। वह बेंत लेकर वहाँ से चलने लगा तो उस बूढ़े ने कहा "देखो बेटे, इसे साधारण बेंत ना समझना। जिसे तुम पीटना चाहो, इससे कहो तो यह पीटेगी। यह तेरे बहुत काम आयेगी।"

राघव उसकी बातों पर चकित होता हुआ बोला "बेंत, पीटो हवा को"। वह बेंत उसके हाथों से निकल पड़ी और हवा को पीटने लगी। खुशी-खुशी राघव ने वह बेंत ली और चल पड़ा। जाते-जाते जब वह सोचने लगा कि गधा और थाली उस बूढ़ी के ही घर में बदले गये होंगे। सीधे वह उस बूढ़ी के पास गया।

"क्यों दादी माँ, ठीक तो हो?" राघव ने पूछा। बूढ़ी ने कहा "मुझे तो नहीं लगता कि कभी मैने तुम्हें देखा है"। उसे देखकर बूढ़ी और उसका बेटा ड़र गये। उन्होने सोचा कि शायद उसे सच्चाई मालूम हो गयी है। गधे और थाली को वापस लेने के लिए ही वह यहाँ आया होगा।

बूढ़ी का बेटा हाँ में हाँ मिलाता हुआ बोला "हाँ, तुमको हमने कभी नहीं देखा"।

"मेरे गधे और थाली को तुम्हीं लोगों ने चुराया है। अब ही सही, याद आया?" याद दिलाते हुए राघव ने पूछा।

बूढ़ी के बेटे ने कहा "हमने तुम्हारी किसी चीज़ की चोरी नहीं की" राघव ने बेंत से कहा "उसे पीटो"। तुरंत वह बेंत हवा में उड़ती हुई गयी और बूढ़ी के बेटे की खूब पिटाई की। हाँ, लातों के भूत बातों से नहीं मानते।

"क्षमा करो बेटे, भूल हो गयी हमसे। हमने तुम्हारी चीज़ों की चोरी की। अपनी चीज़े ले जाओ, मेरे बेटे को छोड़ दो।" बूढ़ी की गिड़गिड़ाहट से पिघलकर राघव ने बेंत को वापस बुला लिया।

राघव गधा, थाली और बेंत को लेकर गाँव पहुँचा। रामी से उसने शादी कर ली और आराम से ज़िन्दगी गुज़ारने लगा। उसके पिता भी उससे बहुत ही प्रसन्न हुआ।

पति-पत्नी

रंगापूर का रंगा बहुत ही क्रोधी स्वभाव का था। वह बात-बात पर पत्नी को गालियाँ देता रहता था। उसकी पत्नी सीता भुलक्कड थी, इसलिए उससे ग़लतियाँ हो जाती थीं। वह तो प्रयत्न करती थी कि मुझसे कोई ग़लती ना हो। लेकिन उसके भुलक्कड स्वभाव की वजह से कोई ना कोई ग़लती हो ही जाती थी। इससे उसके पति के क्रोध का पारा और चढ़ जाता था। पति के क्रोध को काबू में रखना उसके लिए संभव नहीं हो पाया। दूसरों ने भी कोशिश की, किन्तु वे भी असफल ही रहे।

रंगा जब अपनी पत्नी को कोसता रहता था, तो अड़ोस-पड़ोस के लोग यह देखते और मुस्कुराकर चुप रह जाते थे। अपने पति की गालियों को वह चुपचाप सुनती रह जाती। कुछ कर नहीं पाती थी। सब के सामने किये जानेवाले इस अपमान को सहना उसके लिए दूभर हो गया। कोई ऐसा उपाय वह निकाल नहीं पायी, जिससे पति चुप रह सके।

एक दिन शाम को उसका पति जब वह खेत से घर लौटा तो उसने पूछा "सबेरे जाते-जाते दो-तीन बार कह चुका था कि कपड़े धोओ। क्या तुमने वह काम किया?"

"भूल गयी।" कहकर वह अपने-आप को कोसने लगी। उसके जवाब से रंगा और भी क्रोधित हो गया। बोला "भूलने के लिए भी दिमाग़ चाहिये और वह तुममें है नहीं? मैंने तो सबेरे ही कहा था कि मुझे शादी पर जाना है। धुले कपड़ों की ज़रूरत है। पर तुम तो भूल गयी हो। इन मैले कपड़ों को पहनकर जाऊँ तो लोग क्या समझेंगे? मेरी वहाँ कितनी बेइज़्ज़ती होगी। तुमसे शादी करने का दंड भुगत रहा हूँ। मुझे अपमान सहना ही पड़ेगा। मेरे लिए तो तुम एक शाप बन गयी हो"। ज़ोर-ज़ोर से वह चिल्लाने लगा।

उसकी ऊँची आवाज़ सुनकर अड़ोस-पड़ोस

के लोग अपने-अपने घरों से बाहर निकले और पति-पत्नी के बीच रोज़मर्रे के इस तमाशे को देखते हुए चले गये। सीता पति के इस व्यवहार से बहुत ही असंतुष्ट हुई। सबों के सामने अपना अपमान उससे सहा नहीं गया। अनजाने में ही उसकी आँखों से अश्रु-धारा बहने लगी।

बहुत ही दुखी होते हुए भी उसने अपने पति को शांत करने का भरसक प्रयत्न किया। उसने कहा "शादी तो कल है। तब तक कपड़े धो डालूँगी। सबेरे तक वे सूख जाएँगे। धुले कपड़े पहनकर आप शादी पर जा पाएँगे"।

पत्नी की इन बातो से रंगा शांत नहीं हुआ। वह बोला "तुम्हें और कुछ बताने की ज़रूरत नहीं है। कपड़े धोने की कोई आवश्यकता नहीं। इन मैले कपड़ों को ही पहनकर जाऊँगा और अपमानित होकर लौटूँगा। तभी तुम्हें खुशी होगी, तुम्हारी आत्मा तृप्त होगी"। कहते हुए वह वहाँ से फ़ौरन निकल पड़ा।

रंगा के चले जाते ही अड़ोस-पड़ोस की दो तीन औरतें उसके पास आयीं और बोलीं "सीता, तुम पर दया आती है। तुम्हारी तकलीफ़ें देखकर बहुत ही दुख होता है। शायद संसार में किसी भी स्त्री को इतने कष्ट सहने नहीं पड़ते होंगे।

इतना अपमान सहकर भी तुम कैसे जी पा रही हो? तुम्हारा पति तो दुर्वास मुनि लगता है जो बात-बात पर क्रोधित होता था। ऐसे क्रोधी पति के साथ परिवार कैसे चला पा रही हो। हम

तुम्हारी जगह होतीं तो आत्महत्या कर लेतीं।" उन्होने सहानुभूति दिखाते हुए अपनी बातों से उसे उकसाया, भड़काया।

सीता को लगा कि अड़ोस-पड़ोस की औरतें ठीक ही कह रही हैं। वह निर्णय पर आ गयी कि पति के साथ उसका रहना असंभव है। उसे लगा कि आत्महत्या ही एकमात्र मार्ग है। अपने पति के नाम उसने एक पत्र लिखा। उसे पलंग पर रखा और घर से बाहर निकल पड़ी।

रंगा शाम को शादी से लौटा। उसने पत्नी का लिखा हुआ पत्र पढ़ा। पसीने से तर हो गया गाँव भर में वह उसे ढूँढ़ता रहा। कहीं भी ना ही वह दिखायी पड़ी या ना ही उसकी लाश।

आख़िर ड़रते-ड़रते वह उसके मायके गया।

बाहर उसका पिता परंधाम बैठा हुआ था। रंगा ने पत्नी का लिखा हुआ वह ख़त उसे दिया और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा।

परंधाम ने वह ख़त पूरा पढ़ लिया और कहा "रंगा, तुम्हारे शादी पर जाने के बाद ही उसने यह ख़त लिखा होगा। उसने अगर आत्महत्या की तो कल ही की होगी। परंतु घर में तो सीता की तरह की एक और लड़की घूम रही है। यह सीता कौन है, कहीं कोई प्रेत तो नहीं?"

इतने में अंदर से सीता बाहर आयी। उसने पिता के हाथ में ख़त और उनके बग़ल में ही बैठे अपने पति को देखा। वह बोली, मानों अभी अभी उसे याद आया हो "मैं भी कितनी भुलक्कड हूँ। आत्महत्या करने घर से निकली और अपने मायके में आकर बैठ गयी। ऐसे क्रोधी पति से परिवार चलाना मुझसे नहीं हो सकता"। कहती हुई वह कुएँ की और दौड़ने लगी।

रंगा ने उसे तुरंत पकड़ लिया और कहा "ठहर जाओ सीता, ठहर जाओ। मेरी नाराज़गी ने तुम्हें मार ड़ालना चाहा तो भूल जाने की तुम्हारी आदत ने तुम्हें बचा लिया। मैने कभी भी सोचा तक नहीं था कि मेरा क्रोध तुम्हारे प्राण छीन लेगा। अगर जानता तो कभी ऐसा पेश ना आता। मैं बदल गया होता। आगे कभी भी तुमपर नाराज़ नहीं होऊँगा। आज से शांत रहने का प्रयत्न करूँगा।"

सीता ने पति के दोनों हाथ पकड़ लिये और कहा "ऐसी बातें मत कीजिये। ग़लती मेरी भी है, मैं जानती हूँ। मुझे भी भूल जाने की बड़ी बुरी आदत है। मैं भी इस आदत से छुटकारा पाने का प्रयत्न करूँगी।"

परंधाम उनकी ये सारी बातें सुन रहा था। पास आया और बोला "एक दूसरे को समझकर पति-पत्नी को परिवार चलाना चाहिये। तब बुरी आदतें भी अपने आप उनसे दूर भागेंगीं। एक और बात ध्यान से सुनो। पति-पत्नी के बीच क्षमा-याचना के लिए कोई स्थान नहीं है। उनके बीच जो है, वह है केवल प्रेम, अनुराग।

उसकी बातों पर रंगा और सीता ने सिर झुका लिया और मुस्कुरा पड़े।

प्रकृति-रूप अनेक

उड़ते सियार?

उड़ते सियारों के बारे में क्या कभी आपने सुना? आप शायद जानना चाहेंगे कि यह कैसे संभव है? संभव है, परंतु हाँ, ये सियार नहीं हैं बल्कि चमगीदड़ हैं। इनके चेहरे सियारों के चेहरे जैसे हैं। इसलिए इनका नाम पड़ा उड़ते सियार। मलेशिया के जंगलों में ये अधिकाधिक पाये जाते हैं। कोमल फलों को ये बड़े चाव से खाते हैं। ये अपने पंखों से फल देखते हैं। इसके एक एक पंख की लंबाई चार फुट की होती है। चूँकि इनका मुख्य आहार फल ही हैं, अत: आसानी से इन्हें घरों में पाल सकते हैं। इसके लिए बड़े घोंसलों की ज़रूरत पड़ती है। इन्हें पालतू बना देंगे तो फिर कभी घर छोड़कर नहीं जायेंगे। चमगीदड़ों की तरह ये भी उल्टे लटकते रहते हैं।

हानिकारक कुकुरमुत्ते

लगभग किसी भी पौधे के उगने के लिए प्रकाश की आवश्यकता है। लेकिन कुकुरमुत्तों को पनपने के लिए रोशनी की कोई ज़रूरत नहीं पड़ती। वर्षा ऋतु में आप सबेरे-सबेरे उठकर चलने लगेंगे तो कल शाम को जिन कुकुरमुत्तों का नामोनिशान ही नहीं, वे ज़मीन पर फैले हुए दिखेंगे। बच्चे उन्हें उल्लास से अपने हाथ में लेते हैं और निचोड डालते हैं। परंतु इनमें से कुछ बहुत ही हानिकारक हैं। वे विषपूरित होते हैं। इन्हें छूते ही खुजली होती है। तंदुरुस्ती ख़राब होती है। कौन-सा अच्छा है और कौन-सा विषैला, यह अनुभवी ही बता सकते हैं। इसलिए बच्चे ऐसे कुकुरमुत्तों से दूर रहें।

सूरज की मृत्यु

क्या आप उस दिन का अंदाजा लगा सकते हैं, जिस दिन सूर्यमंडल के केंद्र-स्थान में हैड्रोजन ख़तम हो जायेगा। उस समय जो अणुविस्फोट होगा, उससे सूर्य मंडल विस्तृत होगा और वह भयानक लाल मंडल में परिवर्तित होगा। इससे भूमंडल भस्म हो जायेगा। इसके बाद सूर्यमंडल वर्तमान आकार से सौ गुना अधिक बड़ा हो जायेगा और अंतरिक्ष में धूम्र की अंगूठी के रूप में बदल जायेगा। यह सब कब होगा, इसका कोई अंदाजा है आपको? विज्ञानवेत्ताओं का कहना है कि करोड़ों सालों के बाद ऐसा होनेवाला है।
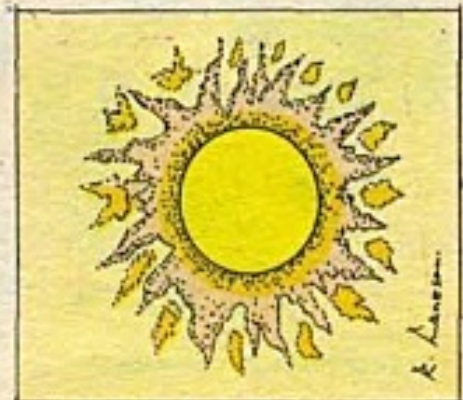
कैम्को ने संवारी
चाहिए. मस्त-मज़ेदार-खरी ये चॉकलेट
धुनिक प्लांट की हैं भेंट. कैम्को,
ज़ा मिले सबको !
Campco
mega bite
Fun Bite
Rs. 1.50
है खरी मस्ती!
Campco

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, अक्तूबर, १९९४ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

S.B. Prasad

S.B. Prasad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० अगस्त, '९४ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

जून, १९९४, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **जल ही है मेरा सखा बल**

दूसरा फोटो : **जंगल में ही मेरा कुशल-मंगल**

प्रेषक : एम. लक्ष्मणाचार्यलु, ए.एम. हिन्दुस्तान केबल्स लि., हिन्दुस्तान केबल्स लिमिटेड, हैदराबाद - ५०० ०५१.

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु ४८/-

चन्दा भेजने का पता :

डाल्टन एजन्सीज़, चन्दामामा बिल्डिंग्ज़, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.